समर्पण

श्रद्धेय बाबू सूरजभान जी,

'स्वर्गीय जैन कवि' बाबू ज्योति प्रसाद जी को बनाने वाले आप ही हैं । इतना ही क्यों, सहस्रों कष्ट सहकर तथा अपने तन मन और धन को लगाकर वर्तमान जैन समाज को नव जीवन प्रदान करने वाले तथा उसे उन्नति के पथ पर अग्रसर करने वाले भी आप ही हैं। अतः मैं स्वर्गीय जैनकवि का जीवन चरित्र तथा उनकी कविताओं आदि का यह संग्रह बड़ी श्रद्धा के साथ आपको भेंट करता हूँ।

आपका चिर प्रशंसक,

माई दयाल जैन ।
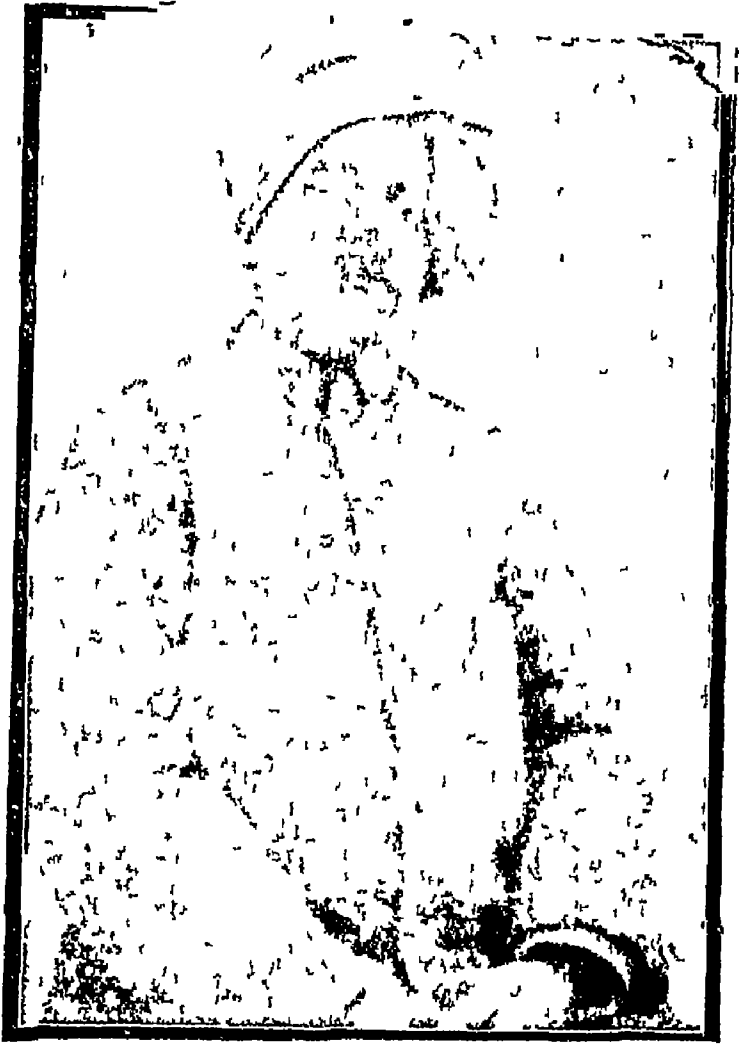
जैनकवि स्व॰ श्री बा॰ ज्योतिप्रशादजी जैन
सं॰ जैनप्रदीप—देववन्द, यू॰ पी॰

धन्यवाद

इस पुस्तक के छपाने मे निम्न लिखित महानुभावों से आर्थिक सहायता प्राप्त हुई है। इसके लिये मैं उनका हृदय से आभारी हूं।

१—एक वकील साहब देहली।	२५)
२—श्रीमान ला० मन्नूमल जी बैङ्कर, मेरठ।	२०)
३—दानवीर श्रीमन्त सेठ लक्ष्मीचन्दजी बैङ्कर भेलसा	२०)
४—श्रीमान लाला तनसुख राय जी मैनेजिंग डायरेक्टर तिलक बीमा कम्पनी, न्यू० देहली।	१५)
५—श्रीमान बाबू विश्वम्भर दास जी गार्गीय, झाँसी	१०)
६—श्रीमान लाला जौहरी मलजी सर्राफ, देहली।	१०)
७—श्रीमान बाबू अजित प्रसाद जी एम० ए० एल० एल० बी० एडवोकेट, लखनऊ	१०)
८—श्रीमान बाबू अजितप्रसादजी बी. ए. मालिक कैम्ब्रिज बुक कम्पनी, देहली।	१०)
९—श्रीमान् बाबू चन्दूलालजी बी. ए. एल. एल बी. वकील, देहली।	१०)
११—श्रीमान बाबू लाल चन्दजी बी. ए. एल एल, बी. एडवोकेट, रोहतक	१०)
१०—श्रीमान पं० जुगलकिशोरजी मुख्तार अधिष्ठाता वीर सेवा मन्दिर, सरसावा।	१०)
१२—श्रीमान बाबू जैन दास जी एम. एससी. एल एल बी० वकील, देहली।	१०)
१३—श्री० डा० जयप्रकाश साहब हदशमशाबाद, आगरा	१०)
१४—श्रीमान् पं० चन्द्रकुमार जी एम. ए. एल. एल. बी, सेक्रेट्री भारत बीमा कम्पनी, न्यू देहली।	१०)
१५—श्रीमान ला० उग्रसेन जी, जैन हाईस्कूल बड़ौत	५)
जोड़	१८५)

नम्र निवेदन

अब से १८-१९ वर्ष पहले एक सामाजिक कार्यकर्ता के रूप मे स्वर्गीय बाबू ज्योति प्रसादजी से मेरा प्रथम परिचय हुआ था और वह बढ़ता हुआ मित्रता की हद तक पहुंच गया था। इसके अतिरिक्त मेरी उनसे और कोई रिश्तेदारी न थी, जैसा कि कुछ आदमियों को भ्रम होगया है।

उनके स्वर्गवास की खबर पढ़ते ही मेरे मन में विचार हुआ कि अच्छा हो यदि उनका जीवन-चरित्र लिखा जाय तथा उनकी कविताएं आदि संग्रह करके प्रकाशित की जांय। श्रद्धेय पं० जुगल-किशोरजी मुख्तार तथा मित्रवर बाबू विश्वम्भरदास जी गार्गीय से इस बारे में बात-चीत हुई। दोनों ने इस विचार को न केवल पसन्द ही किया बल्कि मुझे समुचित प्रोत्साहन और सहायता का वचन भी दिया। जैनसमाज के अन्य कई महानुभावों ने भी इस विचार का स्वागत किया और इस काम की सफलता के लिये सद्भावनाएं प्रगट कीं। पर मैं चाहता था कि इस कार्य को "स्वर्गीय जैन कवि' का कोई दूसरा गहरा मित्र हाथ मे लेता जो उनके अंतरंग से भी पूर्णरूप से परिचित होता।

उनकी मृत्यु के तीन महीने बाद ही सन् १९३७ की गर्मियों की छुट्टियों मे सामग्री इकट्ठी करने के वास्ते मैं देवबन्द चला गया

वहां चिरंजीव आदीश्वर प्रसाद 'जैन कवि' के भतीजे ने मुझे हर प्रकार का आराम दिया और तमाम सामग्री मेरे सामने उपस्थित करदी तथा मुझे देवबन्द के प्रमुख व्यक्तियों और बहुत से आदमियों से मिलाया जिनसे मुझे उनके बारेमे बहुत सी बातें मालूम हुईं। मैंने उनके बारे में सभी बातें तथा गुण और दोष यथाशक्ति मालूम करने का प्रयत्न किया। वहां मैंने १३-१४ घन्टे प्रतिदिन एक सप्ताह काम करके 'जैन प्रदीप' आदि पत्रों की फाइलों तथा उनकी रचनाओं के कोई सोलह सत्तरह हजार से अधिक पृष्ठों से नोट्स लिए और कविताएं भी कुछ नकल की। नकल करने के काम मे मुझे श्रीयुत श्रीराम गुप्ता से विशेष सहायता मिली। परिश्रम पूर्ण काम करने और खाली बातें करने में कितना अन्तर है, यह बात नवयुवक श्रीरामजी से सीख सकते हैं। समाचार पत्रों में अपील पर अपील करने पर भी कोई सामग्री न मिली और न ही सिवाय दो सज्जनों के किसी से सहायता मिली। इससे जहाँ समाज की ऐसे कार्यों के प्रति उदासीनता प्रगट होती है, वहां यह भी प्रगट होता है कि जैन पत्रों का अपने पाठकों पर कितना प्रभाव है। अन्य देशों मे एक पत्र के पाठक उस पत्र की अपील पर हर प्रकार की सहायता करने को तैयार रहते हैं।

जिन महानुभावों ने मेरे कहने मात्र ही से इस काम मे चन्दे से सहायता की है, उनके नाम अन्यत्र दिये गए हैं। मैं इन महानुभावों के नामों को प्रसिद्ध करने के लिये नहीं वरन् दूसरों को ऐसे कामों मे हाथ बटाने की प्रेरणा करने के लिये दे रहा हूँ, कारण

कि ये सभी महानुभाव जैन समाज के प्रसिद्ध व्यक्ति हैं। इस पुस्तक के प्रकाशन का समस्त श्रेय इन्ही को मिलना चाहिये। प्रकाशन खर्च के बढ़ जाने या पूरा न होने का भय एक नंगी तलवार के समान मेरे सर पर हर समय लटकता रहता था। देववन्द से बिल्कुल सहायता न मिलने और दो तीन महानुभावों से चन्दे के रुपये न आने के कारण मुझे कुछ हानि उठानी पड़ रही है। यह एक कटु अनुभव है। यह पुस्तक किसी स्वार्थ भाव से नहीं लिखी गई है। यदि घाटे का रुपया पूरा होने पर कुछ बच गया तो वह ऐसे ही कामों पर खर्च किया जायगा यह पुस्तक किसी स्वार्थ भाव से नहीं लिखी है।

जैन कवि के अन्यतम मित्र और प्रसिद्ध विद्वानश्रद्धेय पंडित जुगलकिशोरजी मुख्तार ने इस पुस्तक का सशोधन करके, मान्यवर बाबू अजित प्रसाद जी वकील लखनऊ तथा भूतपूर्व जज हाईकोर्ट बीकानेर और जावरा ने प्रस्तावना लिखकर, मान्यवर ला० जौहरीमल जी सर्राफ ने कष्ट सहकर चन्दे तथा प्रकाशन कार्य में सहयोग देकर और मित्रवर लाला पन्नालाल जी अग्रवाल ने प्रूफ देखकर जो सहायता दी है, उसका मैं हृदय से आभारी हूँ।

फ़ारसी भाषा के जगद्विख्यात कवि सादी का कथन है कि—
نام نیک رفتگان ضائع مکن। जिसका अर्थ है 'गुजरे हुओ का पवित्र नाम नष्ट न कर।' समाज के एक प्रसिद्ध निस्वार्थ कार्यकर्ता तथा कवि की स्मृति कायम रहे, उसकी कविताएं नष्ट न हों और समाज को आगे भी उसकी कृतियों तथा जीवन से उपदेश मिलता

रहे, इसी विचार से यह काम किया गया है। इस पुस्तक में मैंने जो कुछ लिखा है वह प्रस्तुत सामग्री तथा अपने परिचय के आधार पर सचाई निष्पक्षता और साहस के साथ लिखा है। एक आदमी के बारे में हम सब एक राय नहीं रखते, इसलिये मेरी कई बातों से दूसरे महानुभावों को मतभेद हो सकता है। जैसा मैंने उनको देखा तथा समझा है, वैसा ही चित्रित करने का प्रयत्न किया है।

यदि इस पुस्तक के अध्ययन से पाठकों के हृदय में निस्वार्थ समाज सेवा, प्रेम, परोपकार, कर्मशीलता तथा काव्य प्रेम के कुछ भी भाव जागृत हुए, तो मैं अपने परिश्रम को निष्फल न समझूंगा।

भेलसा (रियासत ग्वालियर) माईदयाल जैन

अश्विन शुक्ला अष्टमी,

वी० स० २४६४

प्रस्तावना

श्री ज्योतिप्रसाद जी के जीवन चरित्र की प्रस्तावना लिखने की प्रार्थना, विज्ञ सम्पादक ने, स्वर्गीय जैन वीर के संरक्षक, पथ प्रदर्शक, मित्र, और गुरुवर्य श्री सूरजभान जी से की थी। प्रस्तुत पुस्तक में श्री सूरजभान जी का जिक्र कई स्थान पर आया है। और इस कारण उन्होंने प्रार्थना अस्वीकार कर दी।

मेरा परिचय श्री ज्योतिप्रसाद जी से ३०-३५ वरस का है उन के जीवन की दो चार इनी गिनी विशेषता ही ऐसी हैं, जिन से उनका नाम जैन जाति की नेता श्रेणी में चिरस्थायी रहेगा।

"जैन कवि" के नाम से प्रसिद्धि प्राप्त करने वालों में वह अग्रगामी हैं।

३० वरस की उम्र में सन्तान रहित पत्नी वियोग होने पर भी पुनर्विवाह का विचार न कर और ब्रह्मचारी जीवन व्यतीत करके श्री ज्योतिप्रसाद ने जैन समाज को आदर्श मार्ग दिखला दिया है।

ज्योतिप्रसाद जी किसी दलबन्दी या पार्टी में न थे। वह स्वतन्त्र

विचार करने वाले, निर्भीक काम करने वाले, अथक परिश्रमी, धुन के पक्के, श्रद्धानारूढ़ थे। समाज सेवा और धर्म प्रभावना के किसी काम में वह कभी किसी से पीछे नहीं रहे। आगे बढने की आदत न थी। मिलकर साथ काम करना वह अपना कर्तव्य समझते थे।

सम्पादक महोदय का यह कथन कि उनमें "लोकेशना" का भाव कमजोरी की हद तक था, मुझे ठीक नहीं जँचता। मैंने उनके जीवन भर में ऐसी कोई बात न देखी न सुनी जिससे यह नतीजा निकले कि श्री ज्योतिप्रसाद ने किसी बुरी बात को आवश्यक समय पर इस डर से छिपाया हो, या छिपाने का प्रयत्न किया हो, कि स्पष्ट कहने या करने से लोग उनको बुरा कहेंगे, या समझेंगे।

रही दूसरी बात कि उनमें किसी एक सुधार और काम के पीछे पडने की आदत और धुन न थी। यहाँ भी मुझे विज्ञसम्पादक से इत्तिफाक नहीं है। पिछले ४० बरस में बहुतेरे जैनवीरों ने बहुतेरे काम उठाये, किन्तु समाज ऐसा रूढ़िग्रस्त, अशिक्षित और संकुचित विचार है कि किसी की धुन और लगन कुछ न जान पडी। और ऐसी अवस्था में यह त्रुटिसूचक समालोचना सबके सम्बन्ध मे लागू हो सकती है। दानवीर सेठ माणिक चन्द J P ने छात्रालय स्थापित करने में अपनी भरपूर शक्ति लगादी, किन्तु समाज ने खुले दिल से उनका साथ न दिया। जैन कालिज के लिये कितने बरस से कितना कुछ किया गया, किन्तु अडङ्गा लगाने वाले रुकावटें डालते ही रहे, और नतीजा कुछ न निकला। क्या किसी को जैन कालिज की लगन न थी? ऋषभ ब्रह्मचर्या-

श्रम के वास्ते कितनों ने कितना आत्मोत्सर्ग किया पर उनका सब प्रयत्न स्वप्नक्रिया मात्र रह गया। श्री ज्योतिप्रसाद ने अपनी पूरी शक्ति "जैन प्रचारक" "जैन प्रदीप" तथा "जैन नारी हितकारी,, के चलाने मे लगादी, और तन मन धन से धुन के पक्के होकर इस काम के पीछे पड़े रहे किन्तु समाज ने सहयोग न दिया, और विवश होकर उनको अपना उद्देश्य छोड़ना पड़ा।

मुझे कोई ऐसा प्रसंग नही मालूम हुआ कि जिस से यह आवश्यकीय अनुमान किया जासके कि श्री ज्योतिप्रसाद के अन्तिम ८-१० वरस में बड़प्पन प्रियता और अपनी प्रशंसा सुनने के भाव प्रकट होने लगे थे।

सामान्यतया तो यह सब त्रुटियां ऐसीहैं जिन से कोई बचाहो। कविता संग्रह में यदि "जैन साखोच्चार" भी संकलित कर लिया जाता तो अच्छा होता। अग्रवालों में प्रचलित आदीश्वर ब्याह विधान साखोच्चार "वंदों देव युगादि जिन" आदि से श्री ज्योतिप्रसाद की रचना पदलालित्य, अर्थगौरव,भाव और भाषा में कहीं बढ़ी चढ़ी है।

विज्ञ और उत्साही सम्पादक ने एक आधुनिक जैन वीर का जीवन चरित्र लिखकर समाज का भारी उपकार किया है। खेद है कि उनको इस काम में समाज से आर्थिक वा साहित्यिक प्रोत्साहन यथेष्ठ रूप में नहीं मिला।

समाज से मेरी प्रार्थना है, और मुझे आशा है, कि प्रकाशित

पुस्तक का जैन युवक मण्डल हार्दिक स्वागत करेगा। जितनी प्रतियां छपी हैं हाथों हाथ बिक जावेंगी, और शीघ्र ही दूसरी आवृत्ति की माग जोरों से होगी। ऐसा होने से विज्ञ सम्पादक श्री सूरजभान जी जैसे अन्य जैन वीरों का आख्यान लिखने में प्रोत्साहित होंगे, और समाजोन्नति तथा धर्म प्रभावना के मार्ग की रेखा स्पष्ट नजर आने लगेगी।

आश्विन प्रतिपदा, २४६४
अजिताश्रम,
लखनऊ।

अजित प्रसाद

जीवन चरित्र

प्रसिद्ध अङ्गरेज़ लेखक कारलाइल का कथन है कि मनुष्य को मनुष्य जाति में बहुत बडी दिलचस्पी है। यही कारण है कि हम दूसरे आदमियों—प्राय महापुरुषों—के जीवन चरित्रों, आत्म कथाओं, डायरियों, संस्मरणों और अनुभवों को बड़ी दिलचस्पी से पढ़ते हैं। मनुष्य स्वभाव से उत्सुक, गुप्त बातों को जानने का इच्छुक और नकल करने वाला होता है। इस लिये मनुष्य दूसरों के जीवन चरित्र आदि पढकर उनके अनुभव, गुप्त बातें, तथा दुख सुख आदि की बातें जानना चाहता है और उनके अच्छे कामों की नकल करना चाहता है। सभी आदमियों के जीवनों की बडी बड़ी बातें समान सी होती हैं, परन्तु भेद यह होता है कि एक आदमी एक परिस्थिति में एक प्रकार से काम करता है और दूसरा आदमी और तरह से। यह भेद ही एक आदमी को सफल तथा महान बनाता है और दूसरे को असफल और छोटा बनाता है। इसी लिए भिन्न भिन्न लोगों की आवश्कताओं को पूरा करने के लिये सभी क्षेत्रों के महापुरुषों के बहुत से जीवन चरित्र होने चाहिये।

जीवन चरित्रों के उपयोग और महत्व को एक कवि ने बड़ी सुन्दरता के साथ इस पद्य में कह दिया है:—

Lives of great men all remind, us
We can make our lives sublime,

And parting leave behind us,
Footprints on the sands of time,

भावार्थ यही है कि महापुरुषों के जीवन चरित्र हमे यह बात सिखाते हैं कि हम भी अपने जीवनों को महान बना सकते हैं और मरते समय अपना नाम छोड़ सकते हैं। देशभक्त जार्ज वाशिंगटन के जीवन चरित्र को पढ़ कर ही अब्राहम लिंकन देशभक्त बन गया। महात्मा गांधी पर श्री रायचन्द्र जी और टालस्टाई के जीवनों का बड़ा प्रभाव पड़ा है। इसके अतिरिक्त जीवन चरित्रों के अध्ययन से हम अपने इस जीवन को सुन्दर तथा सफल रूप से व्यतीत करने की कला को सीखते हैं तथा अपने मनों का संस्कृत और चरित्र को दृढ़ करते हैं। जीवन चरित्रों का अध्ययन साहित्यक आनंद (Literary Pleasure) देता है। जीवन चरित्र महापुरुषों के जीवनों की स्मृतियों को ताजा करते हैं और हमे उनकी साक्षात सगति का लाभ प्रदान करते हैं। जिन महापुरुषो ने अपने कामों से इतिहास पर छाप लगाई है, इतिहास के प्रवाह को बदल दिया है, संसार को बडे बड़े दर्शन महान विचार, बड़े बड़े आविष्कार और महान आन्दोलन दिये है जीवन चरित्रों से उनके व्यक्तित्व का पता लगता है। जीवन चरित्रों की व्यवहारिक उपयोगिता यह है कि उनके अध्ययन से हमे शान्ति मिलती है, हमारी सहानुभूति का क्षेत्र बढ़ता है, हमारा स्वार्थ भाव दूर होता है, हमे प्रोत्साहन तथा सच्चा मार्ग मिलता है और उनके उच्चादर्शों से हमारे हृदयों में महत्वाकांक्षाएं पैदा होती हैं।

इसी लिये जीवन चरित्र साहित्य का एक बड़ा अङ्ग है। इतिहास में देशों, राष्ट्रों और जन समूह के आन्दोलनों का वर्णन तथा उनके क्रमिक (Gradual) उत्थान या पतन का जिकर होता है, परन्तु जीवन चरित्र मे एक आदमी की जीवन से मृत्यु तक की कहानी होती है और उसमें दूसरे आदमियों का उल्लेख—चाहे वह आदमी कितने भी बड़े क्यों न हो—गौण रूप से आता है। पुराने जीवन चरित्रों में लेखकों ने अपने चरित्र नायकों (Heroes) की प्रतिष्ठा तथा कीर्ति का गाना गाया है और उनको देवताओं के रूप मे ससार के सामने पेश किया है। प्रत्यक्ष उपदेश उनमें ठूंस ठूंस कर भरा होता है। बुरे आदमियों को को महा राक्षस, महा पतित और अधम चित्रित किया है। उन में चरित्र नायक की परिस्थिति और उसके क्रमिक विकास का बिलकुल पता नहीं मिलता। चमत्कारों, ऋद्धियों और इसी प्रकार की बातों का इतना सग्रह कर दिया जाता है कि पढ़ने वाले के हृदय में यह भाव पैदा हो जाता है कि यह किसी आदमी का जीवन चरित्र नहीं है बल्कि किसी अलौकिक और अद्भुत व्यक्ति का चरित्र है वह समझने लगता है कि ये सब बातें उसकी पहुँच से परे हैं। इसलिये इस प्रकार के जीवन चरित्र आजकल कम पसन्द किये जाते हैं और उन से पढ़ने वाले की उत्सुकता को संतोष नहीं मिलता। वर्तमान काल में जीवन चरित्र की श्रेष्ठता इसी बात में मानी जाती है कि वह किसी आदमी का सच्चा चित्र हो और उससे उस आदमी की परिस्थिति का पूरा पता लग जाय क्योंकि

परिस्थिति (Enviornments) के ज्ञान के बिना चरित्र नायक के गुणों या दुर्गुणों का तुलनात्मक पता नहीं लग सकता। जीवन चरित्र में चरित्र नायक के जीवन से सम्बन्ध रखने वाली समस्याओं का हल होना चाहिये। वर्णनात्मक जीवन चरित्र से आलोचनात्मक जीवन चरित्र अच्छा माना जाता है। जीवन चरित्र में सचाई कितनी होनी चाहिए इसके बारे में फ्रान्स के प्रसिद्ध विचारक तथा लेखक वौलटेयर (Voltaii) का यह वाक्य याद रखना चाहिए।"We owe consideration to the living, te the dead we owe truth only" अर्थात जीवित आदमियों का हमें आदर और लिहाज़ करना चाहिये, परन्तु मृत आदमियों के लिए हमें सच्चाई से काम लेना चाहिये। पर इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि सचाई का आशय नगा-पन नहीं है।

जीवन चरित्रों से भी अधिक लाभदायक आत्मचरित्र (autobiography) होता है। परन्तु आत्मचरित्र का लिखना कठिन है और बिरले ही आदमी आत्म चरित्र सफल रूप से लिख सकते हैं। बड़े आदमियों के लिखे पत्र तथा उनके पास आए हुये पत्र भी हमें उनके बारे में बहुत सी बातें बता सकते हैं। इस लिये पत्रों के संग्रह भी प्रकाशित होने चाहिये। व्यक्तिगत डायरियां भी कम उपयोगी नहीं होतीं। एक लेखक का तो यह कथन था कि वह किसी आदमी का चरित्र (character) उसकी आमद और खर्च की बही को देखकर बता सकता है।

परन्तु पत्र, डायरिया, खर्च वही जीवन चरित्रों या आत्म चरित्रोंका का स्थान नहीं ले सकते, पर इनका संग्रह होना आवश्यक है।

जीवन चरित्र लेखक मे कुछ आवश्यक गुण होने चाहिएं जैसे अपने चरित्र नायक मे बड़ी श्रद्धा, सत्य प्रेम, धुन, निर्दयता पूर्वक गहरा देखने की शक्ति, धैर्य, खोज, ऊचित सामग्री चुनने और छोड़ने की शक्ति (Power Selection and Ommission) और समानता (Proportion) के साथ लिखने की आदत होनी चाहिए। जीवन चरित्र लिखना भी कविता लिखने के समान है और जैसे अच्छे कवि पैदायशी होते हैं। वैसे ही अच्छे चरित्र लेखक भी पैदायिशी होते है। एक सफल चरित्र लेखक देश की बड़ी सेवा करता है। वह एक मृत महापुरुष को दुबारा बनाकर जनता के सामने पेश करता है। वर्तमान शैली की जीवन चरित्र लेखन—कला अभो अपनी आरम्भ अवस्था मे ही है। यूरुप और अमेरिका में जीवन चरित्रों का इतना प्रचार है कि वहां सभी क्षेत्रों के बड़े बड़े आदमियों के बहुत से जीवन चरित्र मिलते हैं तथा भिन्न २ दृष्टि कोणों से लिखे हुए एक आदमी के कई चरित्र मिलते हैं। उनके पत्र और डायरियां तक छपती हैं। लेखकों की तमाम रचनाओं के संग्रह निकाले जाते हैं। बड़े आदमियों से सम्बन्ध रखने वाली सामाग्री इकट्ठी की जाती है। एक एक जीवन चरित्र की सहस्त्रों प्रतिया चन्द दिनों मे बिक जाती हैं। आप को यह सुनकर आश्चर्य होगा कि जर्मन डिक्टेटर हिटलर के एक अंग्रेजी जीवन चरित्र की चालीस हजार प्रतियां चार वर्ष

मे बिक गई और इगलैण्ड के भूतपूर्व सम्राट एडवर्ड अष्टम के एक ही जीवन चरित्र के आठ संस्करण तीन महीने मे छप गए। वहां छोटे बड़े सस्ते तथा राज संस्करण निकल जाते हैं। इसी मे उन देशों की उन्नति का रहस्य है।

भारत वर्ष मे जीवन चरित्रों की दशा सतोष जनक नहीं है। पिछले वर्षों मे महात्मा गाधी और पंडित जवाहरलाल नेहरू के आत्म चरित्रों की गूंज रही है और निसंदेह वे महान कृतिया है। पुराणों और कथाओं की शक्ल मे पुराने जीवन चरित्र मिलते हैं। गोस्वामी तुलसी कृत रामायण जनता का सबसे प्यारा जीवन चरित्र है। परन्तु प्रायः आत्म चरित्र लिखने का रिवाज न था। अपने बारे मे सभी चुप हैं। बड़े २ राजाओं और विद्वानों का हाल मिलना कठिन हो रहा है। शिक्षा का अभाव होने से जीवन चरित्रों की बिक्री भी कम होती है। फिर एक महापुरुष के कई जीवन चरित्र कैसे हों? अंग्रेजी मे छियासठ भागों मे "Dictionary of National Biography" राष्ट्रीय जीवन चरित्र कोष है। भारतवर्ष मे अभी इस की तरफ किसी का ध्यान भी नहीं। महापुरुषों के जीवन चरित्र सम्बन्धी सामग्री संग्रह होनी चाहिए।

जैन समाज के जीवन चरित्र सम्बंधी साहित्य के बारे मे दो बातें लिखकर मैं इस लेख को समाप्ति करना चाहता हू। जैन समाज के पुराण और जीवन-चरित्रो का पुराना साहित्य काफी है। परन्तु नवीन ढंग से लिखा हुआ साहित्य नही के बराबर है तीर्थ-

करों, आचार्यों , जन लेखकों, कवियों, सम्राटों, महापुरुषों और प्रसिद्ध स्त्रियों के जीवन चरित्र नही मिलते। पंडित जुगल किशोरजी का लिखा हुआ 'स्वामी समंत भद्र' एक उच्च कोटि की रचना है। अन्य आचार्यों के जीवन चरित्र भी उसी ढंग से तय्यार होने चाहिए। कितने दुख की बात है कि भगवान महावीर तक का भी कोई प्रामाणिक जीवन चरित्र नहीं है। जब समाज के सामने कोई आदर्श ही नहीं है, तब उन्नति कैसे हो सकती है ? वर्तमान के बड़े आदमियों मे सेठ माणिकचन्दजी, सर सेठ हुकम-चन्द जी, तथा प्रसिद्ध जैन प्रकाशक देवेन्द्र कुमार के चरित्र लिखे गये हैं जीवन चरित्र सम्बन्धी साहित्य की बिक्री बिलकुल नहीं है। क्या जैन समाज साहित्य सम्बंधी अपनी इस कमी को पूरा करने की तरफ ध्यान देगा ?

नोट—इस निबन्ध के लिखने मे ऐस्किथ के निबन्ध (Biography) बैनसन लिखित निबन्ध (Art of Biography) और इन्सा-इक्लो पीडिया ब्रिटेनीका से सहायता ली गई है और लेखक उन का आभार प्रकट करता है।

———

विषय सूची

(अ) जैन लोगों का जैन धर्म पर पैतृक अधिकार (आ) हिन्दु माताए (इ) समाचार पत्रो का महत्व (ई) जाति भेद को मिटा दो (उ) दान परिपाटी को ठीक करो, (ऊ) वीर बन कर कुरीतियों को दूर करो, (ऋ) स्त्री शिक्षा की आवश्यकता, (ॠ) क्या जैन समाज धनी है, (ऌ) जैन मन्दिरों की रचना, (ॡ) स्त्रियों को पूजन अधिकार है, (ए) स्त्रियों की दशा (ऐ) समाज सुधार या राजनैतिक काम,(ओ) सन्तान निग्रह (औ) दश लक्षणी पर्व में हमको क्या करना चाहिए. (अं) इन्द्रियों की दासता (अः) चौधरियों की करतुत, (क) बिरादरी का कसूर, (ख) मनुष्य के परिणाम, (ग) किसानों की दुर्दशा, (घ) दान की दूषित परिपाटी, (ङ) परावलम्बन और स्वालम्बन। (च) स्त्रियों की जिम्मेदारी।

१८—कविताएं

१—जैन झंडा गायन २—नित्य प्रार्थना ३—सृष्टि कृतृत्व मीमाँसा ४—संसार दुख दर्पण ५—समझ मन स्वार्थ का संसार ६—अब हम अमर भये न मरेंगे ७—आत्मन उद्योग कर परमात्मन जो जाय बन ८—वीर महिमा ९—मुझे ऐसा सब्रो करार दे १०—मेरा तार प्रेमका तार हो ११—मेरी भावना १२—प्रेमभरी भावना १३—मेरी अभिलाषा १४—हृदय के भाव १५—अमोलक ऋषि १६—हमारा गोपाल १७—सेठ ज्वाला प्रसाद १८—जातीय दशा और उसके सुधार के उपाय १९—प्रभूजी दीजे यह वरदान २०—करो सब मिल जुल पर उपकार २१—उठो अब करो देश उत्थान २२—हो हम में बल ऐसा भगवान २३—जग-

---

॥ ओ३म् ॥

ज्योति प्रसाद

(जीवन चरित्र, लेखांश और कविताएं)

१

जन्म कालीन देश और समाज
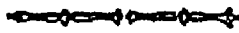
हर एक आदमी पर अपने देश और समाज का बहुत बड़ा प्रभाव पड़ता है। उसका चरित्र, स्वभाव और काम बहुधा आस-पास की परिस्थितियों पर से ही निश्चित होता है। इसलिए यह आवश्यक मालूम होता है कि बाबू ज्योतीप्रसाद का जीवन-चरित्र लिखने से पहिले उनके जन्म-कालीन भारत की राजनैतिक, धार्मिक और सामाजिक हालत का संक्षेप में कुछ परिचय प्राप्त कर लिया जाय।

सन् १८५७ के सिपाही विद्रोह के बाद से भारतवर्ष के राज्य को कम्पनी के हाथ से निकल कर महारानी विक्टोरिया के हाथ

मे आये चौदह पंद्रह वर्ष हो चुके थे और यहा पहिले की अपेक्षा कुछ उदार नीति के साथ राज्य किया जा रहा था। अंग्रेजी लिखे पढ़े भारतीय सरकारी पदों पर नियुक्त किए जा रहे थे और ज्योतिप्रसाद के बाल्य-काल मे ही राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना हो गई थी। इसलिए मृत्युकाल तक के समस्त राष्ट्रीय आन्दोलन को उन्होंने देखा। धार्मिक क्षेत्र मे आर्यसमाज, ब्रह्मो समाज, प्रार्थना समाज, ईसाई पादरियों, अंग्रेजी शिक्षा, विज्ञानवाद, और प्रेस के कारण बड़ी खलबली मची हुई थी। "बाबा वाक्यं प्रमाण" 'सत बचन महाराज' वाली बातें अब कोई सुनने को तय्यार न था। अंग्रेजी शिक्षा से पैदा हुई समालोचक वृत्ति का धर्म मे व्यवहार हो रहा था। और अब शिक्षित समाज अपने घरों को शास्त्रों तथा सभ्यता को टटोल रहा था और उसे प्रकाश मे ला रहा था। सामाजिक दशा पर जितना कम लिखा जाय उतना ही अच्छा है। समाज मे कुरीतियों का कोई अन्त न था। कोई समाज संगठन न था। रूढ़ियो का राज्य था और उनके चक्र से छोटा बड़ा कोई न बच सकता था। इन रूढियों को पालन कराना ही स्थानीय जातीय पचायतों तथा चौधरियो का काम था। समाज का दण्ड-विधान खासकर गरीबों के लिये बहुत सख्त था। स्त्रियों और अछूतों के प्रायः कोई अधिकार न थे।

इस सर्वाङ्ग पतन के होते हुए भी देश की उच्च जातियों मे सब जगह कुछ ऐसे आदमी पैदा हो गये थे जो अंग्रेजी शिक्षा, प्राचीन भारतीय साहित्य के अध्ययन तथा विदेश यात्रा के कारण अपने देश की पतित अवस्था को समझते थे, और तमाम कष्ट

सहकर भी वे यथाशक्ति देश को ऊपर उठाने के सच्चे प्रयत्न में लगे हुए थे। भारतीय इतिहास का यह काल हंसी और विरोध का युग था। हर एक कार्य-कर्ता की बातों को स्वप्न या पागल की बातें कह कर हंसी उडाई जाती थी, और विरोध किया जाता था। फिर भी इस युग के महापुरुषों ने वे काम किए, जिनके फल-स्वरूप आज हमे स्वदेश मे हर तरफ़ जागृति का शीघ्र गामी प्रवाह दृष्टिगोचर हो रहा है। देश सुधार के ये अगुआ—ज्ञात और अज्ञात-हम सब की श्रद्धा और कृतज्ञता के पात्र हैं।

जैन समाज की दशा कई अन्शो मे देश की दशा से ख़राब ही थी। जैन धर्म को कोई जानता न था। और जो अजैन विद्वान उसके बारे मे कुछ जानते भी थे, तो उन का जैन धर्म सम्बन्धी ज्ञान भ्रममूलक और अधूरा ही था। इस धर्म के बारे मे बड़े बडे गलत विचार फैले हुए थे। जैन समाज में ऐसे विद्वानों का प्रायः अभाव था जो इन विचारों का खण्डन करते। जैनधर्म अपनी असली शक्ल मे बहुत कम दिखाई पड़ता था। और उस पर हिन्दू क्रिया काण्डों का बहुत कुछ प्रभाव पड़ा हुआ था। न समाज मे सगठन था और न कुछ जीवन। केन्द्रीय संस्था भी कोई न थी। फिर किसी आन्दोलन का तो जिकर ही क्या ? पर आस पास के आन्दोलनों के प्रभाव से जैन समाज कब बच सकता था ? धीरे धीरे उस पर ज़माने और नई रौशनी का रंग चढ़ने लगा। उत्तर भारत और बम्बई आदि की तरफ़ कुछ ऐसी महान् आत्माएं जैन समाज मे पैदा हुइ जो ज़माने की चाल को पहचानती थीं। उनके हृदयों में जैनधर्म और समाज

के लिये कुछ दर्द पैदा हुआ। वे धर्म प्रचार और समाज उन्नति के लिये इधर उधर काम करने लगे और उन्हों ने पचास वर्ष के करीब हुए मथुरा के चौरासी स्थान पर भारतवर्षीय दिगम्बर जैन महासभा की स्थापना की। इस सभा के कर्णधार कुछ कुछ ज़माने के अनुसार काम करने लगे। समाज में जागृति पैदा करने और उसे उन्नति के मार्ग पर अग्रसर करने के जो सराहनीय तथा अनुकरणीय प्रयत्न इन महापुरुषो ने किये, वे स्वर्ण अक्षरो में लिखने के योग्य हैं। इस छोटीसी पुस्तक में आप बाबू ज्योति प्रसाद के उस काम का हाल पायेंगे जो उन्हों ने उत्तर-भारत के जैनियों में किया।

२

जन्म और शिक्षा

सहारनपुर से २१ मील मेरठ की तरफ देववन्द, जिला सहारनपुर मे, एक प्रसिद्ध पुराना कस्बा है। इसकी आबादी बीस इक्कीस हजार के करीब है। दो तिहाई के लग भग मुसलमान हैं। यहा जैनियों के भी ६० घर हैं। चार जैन मन्दिर हैं। देव वन्द हाथ के बुने सूती कपडे खद्दर, दुतई और खेस के लिये प्रसिद्ध है। यहा एक देवी कुंड भी है जहा चैत के महीने मे हजारों हिंदू यात्री आते हैं। मुसलमानों का अर्बी फारसी भाषा का एक प्रसिद्ध विश्वविद्यालय--दारुलउलूम--भी है। मिस्र देश में क़ाहिरा के अलहज़र नामी मुसलिम विश्वविद्यालय के बाद दूसरे नम्बर पर है। इसी देववन्द को बाबू ज्योतिप्रसाद को जन्म देने का गौरव प्राप्त है।

संसार के बहुत से बडे २ आदमी जिन्हों ने अपने आस पास के हालात पर अपनी छाप लगाई है और जिन्हों ने कुछ ख्याति प्राप्त की है, प्राय बहुत ही साधारण घरों मे पैदा हुये हैं। उत्तरीय भारत मे इलाहाबाद और लाहौर के बीच के भागमें काम करने वाले प्रसिद्ध जैनकार्य कर्ता और सुधारक ज्योति प्रसाद भी देववन्द

के एक अत्यन्त साधारण घर मे आश्विन कृष्ण १० विक्रम सम्वत १९३९ (सन् १८८२ ईस्वी) को पैदा हुए थे। आप के पिता लाला नत्थूमल, एक साधारण से दुकानदार थे और बड़ी ही कठिनता से अपने कुटम्ब का निर्वाह करते थे। किन्तु निर्धनता के इस कष्ट में अभी एक और बडी आपत्ति की वृद्धि होनी थी। जब कि बालक ज्योतिप्रसाद की आयु ७ वर्ष की थी, उनके पिता का स्वर्गवास होगया। इस मुसीबत का अन्दाजा लगाना कोई बड़ी बात नहीं है।

पिता की मृत्यु के समय कुटम्ब में अब कुल चार प्राणी थे यानी विधवा माता, जोतिप्रसाद, छोटा भाई जयप्रकाश और एक छोटी वहन। अब इन तीन छोटे बच्चों का और अपना गुज़ारा करने का तमाम बोझ उनकी माता पर था। भारतवर्ष की ऐसी देवियाँ जो वैधव्य काल मे अपने चरित्र की रक्षा करती हुई परिश्रम करके अपना और अपने बच्चों का निर्वाह करती है सचमुच पूजनीय हैं। और ज्योति प्रसाद की माता तो हमारे और भी अधिक आदर तथा सन्मान के योग्य हैं क्यों कि उन्होंने अपने प्रयत्न से बालक ज्योतिप्रसाद को इस प्रकार शिक्षा दी जिससे वे बड़े हो कर देश और समाज की निस्वार्थ सेवा कर सके।

शिक्षा

निर्धन बच्चों की शिक्षा की कहानी देश के पतन की दर्द-भरी कहानी होती है। न सरकार को उनका फिकर होता है, और न समाज को चिंता यह कहना कोई अतिशयोक्ति नहीं है, कि हमारी निरक्षता (illiteracy) का सबसे बड़ा कारण सरकार

और समाज की उपेक्षा और निर्धन बच्चों की शिक्षा के लिए समुचित प्रबन्ध का न होना है। पचास वर्ष के प्रयत्न बाद भी आज कोई अच्छी हालत नहीं है। जब कि अन्य समुन्नत देशों मे हर एक बालक, बालिका के लिए प्रारम्भिक शिक्षा (Elementary education) मुफ्त और अनिवार्य (free and compulsory) बहुत वर्ष से है, जबकि वहा सौ मे नव्वे,पिचानवे आदमी पढ़े हुए हैं, और जब कि वहा हरएक आदमी की पढ़ाई के सुभीते मौजूद हैं, तब हमारे देश में सौमे दस बारह आदमियों का लिखा पढ़ा होना बड़े दुख की बात है। भारतवर्ष मे शिक्षा के प्रचार के लिए यह नियम होना चाहिये कि कोई गाव प्राइमरी स्कूल से खाली न हो और किसी घर मे कोई अशिक्षित न हो, तथा निर्धनता किसी बालक, बालिका की शिक्षा के मार्ग में रुकावट न बने। तब कहीं शिक्षा का प्रचार हो सकता है। देवबन्द मे यद्यपि एक मिडिल स्कूल था, तथापि बालक ज्योतीप्रसाद को बाबू सूरजभान के प्रयत्न से स्थापित स्थानीय जैन पाठशाल मे पाच वर्ष की आयु में पढ़ने के लिए भरती किया गया।

उस समय इस जैन पाठशाला के अध्यापक कचौरा, ज़िला इटावा, निवासी पंडित झुन्नीलाल जैन थे। पंडित जी एक विद्वान आदमी थे और साथ ही कवि, ज्योतिषी, तथा वैद्य भी थे। बड़े चरित्रवान थे तथा खाने पीने की शुद्धि का बडा ख्याल रखते थे यहाँ तक कि अपने हाथ से ही खाना बनाकर खाते थे। ऐसे योग्य अध्यापक से बालक ज्योतिप्रसाद ने हिन्दी लिखना पढ़ना, गणित, पूजन पाठ आदि पढ़ा। उसी पाठशाला मे कुछ उर्दू भी एक

मौलवी साहब से पढ़ी। पर पढ़ाई का आदर्श साधारण था और इतनी शिक्षा उस जमाने मे काफी समझी जाती थी। विद्यार्थी काल में किसी को उनसे कोई शिकायत न थी और वे अपना काम सदा परिश्रम और ईमानदारी से करते थे। गुरु भक्ति और गुरु सेवा के भाव उनमे कूट कूट कर भरे थे और अंत तक उन्होने अपने गुरु का ख्याल रक्खा।

विद्यार्थी काल ही में बालक ज्योतिप्रसाद का सम्बन्ध देवबन्द के प्रसिद्ध जैन समाज सुधारक बाबू सूरजभान जी वकील से होगया और उस सम्बन्ध से उनकी बुद्धि और ज्ञान बढ़ते ही गए। शिक्षा समाप्त होने पर भी शिक्षा जारी रही।

३

बाबू सूरजभान जी का प्रभाव

क्या काम है जगत में उन मालिकों का,
जो आत्म तुल्य न करें निज आश्रितों को ?

—श्री गिरधर शर्मा

जैन समाज को बाबू सूरजभान जी के सम्बन्ध मे कुछ बताना अनावश्यक है। पिछले ५०, ६० वर्षों मे जैन समाज के आकाश मंडल में आप वास्तविक सूर्य बनकर चमके हैं और भविष्य मे आपका नाम एक महान नेता, उद्धारक और जीवन दायक के रूप मे स्मरण किया जावेगा। ईसाई समाज मे जो स्थान मार्टिन ल्यूथरको, और हिन्दू-समाज मे ऋषि दयानन्द तथा राजा राम मोहन राय को प्राप्त हुआ है, वही स्थान जैन समाज मे आपको प्राप्त होने वाला है। बाबू सूरजभान अभी जिन्दा हैं, इसलिए जैन समाज अभी आपकी उतनी कद्र नहीं कर पाया है, जितनी क़द्र के वे योग्य हैं। आप वर्तमान जैन समाज के निर्माता हैं। जैन समाज को नव जीवन, कार्य शक्ति, नव विचार,

समाज सुधार और संगठन शक्ति का उपदेश देकर क्रॉति के मार्ग पर अग्रसर करने वाले आप ही हैं।

आज से ५०. ६० वर्ष पहले बाबू सूरजभान जी देवबन्द मे वकील थे और समाज तथा धर्म की उन्नति के वास्ते दिन रात तन मन धन से अनथक काम करते थे। जैन धर्म की हीन दशा और जैन समाज की पूर्ण रूप से पतितावस्था को देख कर आप का हृदय व्याकुल था। उस समय समाज के लिए आप क्या २ न कर रहे थे? और कौनसा कष्ट था, जिसे आप उठा न रहे थे?

परन्तु देवबन्द का नाम जबान पर आते ही हर एक जैन-का हृदय जैन समाज के तीन सुप्रसिद्ध नेताओं—श्रद्धेय बाबू सूरज भान जी वकील, विद्वद्वर पं० जुगलकिशोर जी मुख्तार और जैन कवि ज्योतिप्रसाद जी—के लिए श्रद्धा से भर जाता है। और मस्तक आदर से नत हो जाता है। इन तीनों महानुभावों ने जीवन प्रर्यन्त धर्म तथा समाज के लिए जो २ काम किये उनको कौन नही जानता? आरम्भ में इन के कामों से समाज इन पर मुग्ध थी और इनका आदर और सन्मान करती थी। परन्तु बाद मे समाज इनकी प्रगतिशीलता और तीव्रनीति को न तो समझ सकी और न इन के साथ चल सकी। इसलिए इनका विरोध करने लगी। पर इससे क्या? कठिनाइयों से एक सुधारक न कभी घबराया है और न कभी घबरायेगा। इससे समाज मे बड़ी खलबली मच गई। इनको गालियां दी जाने लगीं, इनके जलसों पर लाठियां बरसाई गईं, इनका बहिष्कार किया गया

और इनके पत्रों का पढ़ना महापाप बताया गया । यहाँ तक कि इनको देवबन्द के तीन नास्तिक कहा गया* ।

बाबू सूरजभान और पं० जुगल किशोर जी अभी जिन्दा हैं, और उनके काम का अन्दाजा समाज में पीछे से लगाया जायगा। इस पुस्तक मे आप बाबू ज्योति प्रसाद जी के काम और जीवन का वृतान्त ही पायेंगे।

इस बात को बताने की कुछ विशेष आवश्यकता मालूम नहीं होती कि बाबू ज्योति प्रसाद को बनाने वाले बाबू सूरजभान ही हैं। बाबू सूरजभान जी द्वारा स्थापित पाठशाला मे सात आठ वर्ष का बालक ज्योति प्रसाद शिक्षा पा रहा था। वह निर्धन था, पिता हीन था। और उसे केवल एक विधवामाता का आश्रय प्राप्त था। दो तीन वर्ष में ही बालक ज्योतिप्रसाद भजन मडलियों में और शास्त्रसभाओं मे मधुर बालस्वर में भक्ति के साथ भजन गाने लगा। आगे कुछ भजन तुकबन्दी आप बनाने लगा। बाबू सूरजभान की कृपादृष्टि उस पर गई। उसको होनहार, पात्र और अधिकारी समझा गया। पाठशाला मे उसका विशेष ध्यान रखा जाने लगा। उसकी सरलता, सचरित्रता और गुणों ने ज्योति प्रसाद को सब का प्यारा बना दिया।

बाबू सूरजभान इस समय जैन शास्त्रों को छपवाने और उनके प्रचार करने की धुन में लगे हुए थे। उन्होंने बालक ज्योतिप्रसाद को १२, १३ वर्ष की आयु मे प्रथम ही ४), ५) रु० मासिक पर अपने कार्यालय मे काम करने और प्रेस कापी तैयार करने का

*एक जैन पडित ने इन तीनों महानुभावों को नास्तिक लिखा था।

कुछ काम देकर अपने पास रख लिया। इस तरह ज्योतिप्रसाद को एक नया वायु-मण्डल प्राप्त हुआ। वहां शास्त्र थे, पुस्तकें थीं, समाचार पत्र थे, नवीन विचारों का प्रवाह था और समाज सेवा और धर्मोद्धार की उमंगों का समुद्र तरङ्गें मार रहा था। समाज-सेवियों का संसर्ग था। सगति का प्रभाव पड़ने लगा। संस्कार बनने लगे। उन्नति, ज्ञानोपार्जन, सेवा करने और-चरित्र गठन के भाव दृढ होने लगे। बुराई के लिये वहाँ स्थान न था। इस लिये हृदय पर गहरे-अमिट उत्तम सस्कार पड़ गए और वहाँ अच्छे काम करते २ सेवा कार्य करना आपका एक स्वभाव सा बन गया।

यदि बाबू सूरजभान के पास उस समय धन के साधन होते, तो आप १६, १७ वर्ष के उस नव युवक को उसके घरेलू उत्तर-दायित्व से सर्वथा निश्चिन्त कर देते। ऐसा न हो सका और बाबू ज्योति प्रसाद को आजीविका उपार्जन के लिये अपने गुरु को छोड़कर देवबन्द की मंडी मे मुनीमी करने के लिये जाना पड़ा।

पर जो सम्बन्ध स्थापित हो गया था उसका टूटना कठिन था। काम का मार्ग तो हर एक कठिन से कठिन अवस्था मे भी निकाला जा सकता है। अपना बाजार का काम करने के पश्चात ज्योति प्रसाद को उसी काम की धुन थी। समाज सेवा का चस्का था। समाज सेवा के लिये अवकाश का उपयोग होने लगा।

जैन गजट मे आपकी कवितायें निकलने लगीं, कार्य-कर्ताओं में आपका जिकर होने लगा और ख्याति फैलने लगी। फिर क्या था? ज्योति को चार चांद लग गए। गुदड़ी का लाल प्रकट हो गया। आपकी लेखनी और कार्य शक्ति को मान लिया गया।

हिसार के जैन अनाथ आश्रम की तरफ से निकलने वाले जैन प्रचारक के प्रथम सम्पादक आप बनाये गए।

यह सब बाबू सूरजभान की संगति और व्यक्तित्व का प्रभाव था।

बाबू सूरजभान के विचारों और काम का इतना गहरा प्रभाव आप पर पड़ा कि वह समस्त आयु अपना काम करता रहा। बाबू सूरजभान पर उनकी बड़ी श्रद्धा थी और आपको वे समाज के परमोद्धारक मानते थे। इसलिये उनके विचारों का प्रचार करना और उनके काम मे हाथ बटा कर उनके मिशन (उद्देश्य) को यथाशक्ति पूरा करना आपने अपना कर्तव्य समझा।

४
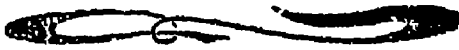
आकृति और चरित्र
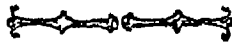
आकृति—बाबू ज्योति प्रसाद दरमियाने कद के आदमी थे। चेहरा भरा हुआ और गोल था। माथा कुछ चौडा था। आरम्भ मे शरीर कुछ पतला था परन्तु पीछे से शरीर दुहरा हो गया था। प्रसन्नता सदा चेहरे से टपकती रहती थी। बानी मीठी और प्रेम भरी थी।

वस्त्र—आप सादगी पसन्द थे और सदा सादे शुद्ध स्वदेशी वस्त्र पहनते थे। कमीज, बन्द गले का खद्दर या पट्टी का कोट और धोती वा पजामा पहनते थे। सिर पर गांधी टोपी या भारी रुपट्टा बाधते थे। पिछले १५, २० वर्षों मे मैंने कभी उन के पांव मे चमड़े के जूते नहीं देखे, वे विना चमड़े के जूते पहनते थे। उत्तर भारत केसभी सुधारको की प्राय यही पोशाक होती थी।

भोजन—सदा बाहर फिरने वाले आदमी को भोजन के बारे मे बड़ा बेपरवा और निसंकोच (बेतकल्लुफ) होना पड़ता है। यही हाल आपका था। घरमे भी जैसा भोजन बन जाता था, खालेते थे। यदि कभी नमक आदि कम जियादा हो जाता था तो क्रोध करना

तो दूर उसका जिकर भी न करते थे। ऋतु और स्थान की विशेष चीजें कुछ शौक से खाते थे।

कमरा—अपने उठने बैठने के लिये आपने एक छोटासा कमरा बना रक्खा था। उसमें एक तख्त, एक पलंग और एक छोटीसी मेज़ रखते थे। प्रायः काम तख्त पर बैठकर ही करते थे। फ़रनीचर का शौक न था। कमरे मे तीर्थ क्षेत्रों, देश और जैन समाज के नेताओं तथा सभाओं के चित्र लगे रहते थे। आप को 'संसार दर्शन' और 'पटलेशया दर्शन' चित्र बड़े प्यारे थे।

दिनचर्या—आप प्रात काल चार साढ़े चार बजे उठकर चारपाई पर ही आधे घंटे के करीब जाप करते थे। फिर शौच आदि से निवृत होकर लिखने पढने का काम करते थे। आठ बजे के करीब स्नान आदि कर मन्दिर देव दर्शन के लिये जाते थे। फिर ११ बजे तक काम करते थे। उसके बाद खाना खाकर आराम करते थे। दो डेढ बजे डाक का काम करते थे। और समय रहने पर पाच बजे तक फिर लिखने पढ़ने का काम करते थे। इसके बाद खाना खाकर बाहर चबूतरे पर बैठकर आने जाने वालों से बात चीत, विचार विनिमय करते और सम्मति लेते देते थे या किसी से मिलने जाते थे। कभी कभी गर्मियों मे भी रात को लिखते थे। रात के दस बजे सोजाते थे। यह आपकी दिन चर्य्या थी।

चरित्र—एक अच्छा आदमी होने के अतिरिक्त बाबू ज्योतिप्रसाद मे कई विशेष गुण थे जिनके कारण आप छोटी सी स्थिति से इतने बड़े आदमी बन गए। प्रेम के आप पुजारी थे और आपने

अपना उपनाम 'प्रेमी' और अपने मकान का नाम 'प्रेम भवन' रखा हुआ था। आपका यह गुण बड़ा प्रसिद्ध था। मिलनसार आप बहुत थे। सभी से मेल-जोल रखते थे। आप मे सहानुभूति, हितचिंतकता, उदारता, सहनशीलता, परोपकारवृत्ति, परिश्रम-शीलता, कुटुम्ब प्रेम और सेवा, धैर्य, और कर्तव्य पालन स्वदेश भक्ति, धर्म तथा समाज प्रेम के भाव अत्यन्त अधिक थे। आप दूसरों पर विश्वास करते थे और स्वयं विश्वासपात्र थे। आप काम के महत्व को समझते थे। देशभक्त गोखले ने महात्मा रानाडे के विषय में कहा था 'जो आदमी काम नहीं करते, जो कार्य के महत्व और शक्ति को नहीं जानते है, प्राय. वे ही निराशावादी होते हैं।" यही बात आप मे थी। आप अटल रूप से एक आशावादी पुरुष के समान जीवन-भर काम करते रहे। आपने कभी अपने प्रभाव और व्यक्तित्व को उचित या अनुचित रूप से धन इकट्ठा करने मे नहीं लगाया।

बहुत पूछ-ताछ करने पर भी मैं आपका कोई ख़ास दुर्गुण मालूम न कर सका। बहुत सम्भव है कि आप मे कुछ साधारण त्रुटि हों, जैसी कि प्रायः साधारण जनता मे पाई जाती हैं और जिन्हे मैं मालूम न कर सका हूं। हाँ, एक सुधारक और समाज के कार्यकर्ता के रूप मे मैंने आप मे एक-दो कमज़ोरियाँ, त्रुटियाँ, अवश्य पाई हैं। आप में 'लोकेशना भाव' (जनता से प्रशसा प्राप्त करने का भाव) अधिक था और इसके कारण आप सुधारकों और स्थिति पालकों के कुछ मध्य मे ही अपना स्थान रखते थे और बहुत से सुधार विचारों को कार्य रूप में परिणत न कर

सके। पर देश और समाज के ऐसे विरले ही कार्य कर्ता और नेता मिलेंगे, जो विचार और काम अथवा भाव और कृति (Idea and Action) मे समान हों। यदि आपने अपने ऐसे विचारों को कार्य रूप मे परिणत कर दिया होता, तो आपका चरित्र और भी उज्वल हो जाता। आप मे किसी एक सुधार और काम के पीछे पड़ने की आदत और धुन न थी। इससे आप किसी भी क्षेत्र मे विशेषता प्राप्त न कर सके। जहाँ तक मैं समझता हूँ, इसका कारण यह था कि आप मे शिक्षा और मनोबल अधिक न थे। साधारण स्वाध्याय तथा लोक परिचय किसी भी कार्यकर्ता को एक विषय का पंडित या विशेषज्ञ नहीं बना सकते। आरम्भ मे यद्यपि आप स्वाभिमानी होते हुए भी निराभिमानी थे, पर अन्तिम आठ दस वर्षों मे आपमे कुछ २ बड़प्पन-प्रियता और अपनी प्रशंसा सुनने के भाव प्रकट होने लगे थे। पर ये एक दो बातें उपेक्षा किये जाने के योग्य हैं। यहा किसी कवि का यह छन्द लिखना कुछ उचित ही होगा:—

चन्द्र बिम्ब के भीतर जैसे नहीं कलंक दिखाता है,
वैसे ही गुण-गण समुद्र में एक दोष छिप जाता है।

५

आजिविका

बेकारी और बेरोजगारी के इस भयंकर युग में रहने वाले आदमियों को यह जानने की कुछ उत्सुकता हो सकती है, कि उन की समाज का एक साधारण स्थिति वाला, पर इतनी बडी सेवा करने वाला, व्यक्ति अपनी आजीविका का क्या प्रबन्ध करता था। पीछे आप यह पढ़ चुके हैं, कि बाबू ज्योति प्रसाद के पिता का देहांत उनकी बाल्यावस्था मे ही हो गया था और उनकी आर्थिक स्थिति अत्यन्त साधारण थी। पाठशाला छोडने के बाद बाबू सूरजभान जी ने उनको अपने पास रख लिया था और फिर आप मंडी मे 'मुनीम गिरी' करने लगे थे। मुनीम गिरी मे आपको अच्छी दक्षता प्राप्त हो गई।

सम्वत् १९६१ विक्रम में आपके भाग्य ने पलटा खाया। आप देवबन्द निवासी लाला हरनाम सिंह जी रईस और आनरेरी मजिस्ट्रेट की रियासत मे मुख्तार आम के पद पर नियत हो गए। अब आप आजीविका के प्रश्न से सर्वथा बेफिक्र हो गए। आप अपने मुख्तारी के कर्तव्यों को बड़ी ईमानदारी और सचाई से पूरा करते थे और लाला हरनामसिंह ने भी आपको सामाजिक कामों के लिये अच्छी स्वतन्त्रता दे रक्खी थी। इधर आपकी प्रतिष्ठा दिन प्रति दिन

समाज मे बढ़ने लगी और आपका हृदय समाज सेवा मे अधिकाधिक प्रवृति करने लगा। जैन समाज मे कार्य कर्ताओं की अत्यन्त आवश्यकता थी। उधर लाला हरनामसिंह के यहाँ एक बहुत साधारण सी बात पर आपने २८ वर्ष की आयु मे वह नौकरी छोड़ दी।

इसी समय आपके छोटे भाई जयप्रकाश भी कुछ काम करने लगे थे। अब आप 'जैन प्रचारक' और फिर 'जैन प्रदीप' का सम्पादन करने लगे। 'जैन प्रदीप' आपका अपना पत्र था और उसके हानि लाभ के आप स्वयं जिम्मेवार थे।

सन् १८२६ मे स्वर्गीय सेठ ज्वाला प्रसाद जी का आप से परिचय होगया और शीघ्र ही वह परिचय घनिष्ठता के दर्जे को पहुंच गया। सेठ जी बड़े समझदार और उदार व्यक्ति थे तथा सामाजिक कार्य कर्ताओं की आर्थिक कठिनाइयों को समझते थे और कार्य कर्ताओं की केवल मौखिक प्रशंसा करने वाले न थे, बल्कि उन की आर्थिक सहायता भी करते थे। आपने चार वर्ष तक नियत रूप से बाबू ज्योतिप्रसाद की ५०) मासिक सहायता की। आप सेठ साहब के प्राइवेट सेक्रेट्री और सलाहकार बन गये थे। सेठ जी के सम्पर्क से आपका स्थानकवासी समाज मे प्रभाव बढ़गया। उधर सेठ जी भी दिगम्बर और स्थानकवासी समाजों में अधिकाधिक भाग लेने लगे और सेठ साहब की भी प्रतिष्ठा खूब बढ़गई। सेठ जी के स्वर्गवास के समय आपकी आयु ५०, ५१ वर्ष की होगी।

सेठ ज्वाला प्रसाद जी महेन्द्रगढ़, रियासत पटियाला, के

रहने वाले थे; परन्तु आप हैदराबाद, दक्कन, में व्यापार करतेथे और प्रायः वहीं रहते थे। आप समाज तथा धर्म के कार्यों मे खूब भाग लेते थे। २१ फर्वरी सन् १९२९ को श्री जैनेन्द्र गुरुकुल, पंचकुला, का प्रथम वार्षिक अधिवेशन था। सेठ साहब ही उसके सभापति थे और आप बाबू ज्योति प्रसाद जी के नाम से परिचित थे। सेठ साहब का सभापति का भाषण आपने ही तैयार किया था। वहा जो परिचय हुआ, वह स्थायी बन गया और बाबू ज्योति प्रसाद जी गुरुकुल की प्रबन्ध कमेटी के प्रतिष्ठित सदस्य बन गए और मृत्यु समय तक गुरुकुल के आनरेरी ज्वायंट सेक्रेट्री रहे। बाबू ज्योति प्रसाद जी ने श्री ऋषभ ब्रह्मचर्य आश्रम, हस्तिनापुर, का काम और प्रबन्ध देखा हुआ था और वे समाज की आवश्यकता को समझते थे। थोड़े ही समय मे जैनेन्द्र गुरुकुल एक जीवित संस्था बनगई। इसमे समाज के अच्छे से अच्छे घर के बालक शिक्षा पाते है। सेठ ज्वाला प्रसाद जी का १७ जनवरी सन् १९३६ को देहली मे स्वर्गवास हो गया। इससे बाबू ज्योति-प्रसाद को बहुत धक्का लगा।

बाबू ज्योति प्रसाद इस बात का सदा ख्याल रखते थे, कि खर्च आमदनी से अधिक न होने पाये। आप सादगी और मितव्यता से जीवन व्यतीत करते थे। इसी से थोड़ी सी आमदनी होते हुए भी, आप सतोष पूर्वक जीवन व्यतीत तथा कुटुम्ब निर्वाह करते रहे और साथ ही समय-समय पर कुछ दान भी देते रहे।

सेठ जी के स्वर्गवास के बाद उनकी सहायता बन्द हो गई। इससे आपको बहुत ही आर्थिक कष्ट सहन करना पड़ा।

६

कुटम्ब जीवन और भीष्म प्रतिज्ञा

विक्रम संवत १९६१ के असौज मे जब कि आपकी अवस्था २२ वर्ष की थी, आपका विवाह कीर्तपुर, जिला बिजनौर, के लाला खैरातीराम की पुत्री मुन्दरीदेवी से हुआ। आपके कोई सन्तान नहीं हुई। इस पर विवाह के आठ वर्ष के पश्चात् आपकी धर्म-पत्नी का वियोग हो गया। उस समय आप चाहते तो दूसरा विवाह कर लेते और संतान न होने की दशा मे तथा अधिक बडी आयु न होने के कारण कोई विशेष रुकावट न थी। पर आपका विचार था, कि जब विधवाओं को दुबारा विवाह करने का अधिकार समाज ने नहीं दिया है, तब एक विधुर पुरुष को क्या अधिकार है, कि वह एक कन्या से विवाह करे। ऐसे विचारों के होते हुए आपने दुबारा विवाह न करने की भीष्म-प्रतिज्ञा की। उस पर दृढ रहे और चरित्र तथा शील की पूर्ण रूप से रक्षा करते हुए समाज सेवा में लग गए। "अपुत्रस्य गति-

नास्ति" जो कहावत बना रखी है, उसका आप खूब मजाक उड़ाया करते थे।

अपने हाथ से अपने भाई, बहन, भानजी और भतीजी के विवाह किये। पिता, धर्मपत्नी, भाई, भाई की धर्मपत्नी और भतीजी के पति की मृत्यु आपको अत्यन्त दुसह्य थीं, पर आप इतने दृढ स्वभाव वाले थे, कि जरा भी अपने निश्चित कार्य से विमुख न हुए। आपका अपना कुछ कुटुम्ब न होते हुए भी इनसे बड़ा प्रेम था। सब साथ ही रहते थे। भाई की मृत्यु के पश्चात घर की तमाम जिम्मेवारी आप पर ही थी। अपने अनुभवों और आदर्शों से उन्होंने घर को शान्ति का मन्दिर बना रखा था। कुटुम्ब का सुख उन्हें बाल्यावस्था से लेकर मृत्यु तक प्राप्त न हुआ, पर अपने सद्‌स्वभाव, उत्कृष्ट प्रेम और मीठी वाणी से अपना कुटुम्ब-क्षेत्र घर की चहार दीवारी के बाहर बहुत विस्तृत बना रक्खा था।

७

सम्पादक रूप में ज्योतिप्रसाद
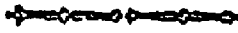
समाचार पत्रों की शक्ति और महत्व को आज कौन नहीं जानता ? समाचारों तथा विचारों को शीघ्र और बड़े पैमाने पर फैलाने का और कोई दूसरा साधन नहीं है। बड़ी २ धार्मिक, सामाजिक और राजनैतिक क्रांतियाँ समाचार पत्रों के द्वारा ही की जा सकी हैं। यही कारण है, कि समुन्नत देशों मे एक-एक समाचार पत्र की लाखों प्रतियॉ हर रोज छपती हैं। इस दशा मे भारतवर्ष अभी बहुत पीछे और जैन समाज तो अत्यन्त पीछे है। पर यह संतोप की बात है, कि जैन समाज के नेता आरम्भ से ही समाचार पत्रों के महत्व को समझते रहे हैं।

दिगम्बर जैन समाज मे महासभा के आधीन हिन्दी जैन गजट समाजमे जागृति पैदा करने के उद्देश्य से ही पचास वर्ष के करीब हुए निकाला गया था। आज दर्जनों जैन समाचार पत्र निकलते हैं।

अब से तीस चालीस वर्ष पहले उत्तर भारत में उर्दु भाषा जाननेवाले जैनियो की संख्या काफी थी। और इन लोगों को हिन्दी

जैन गजट से प्राय: कुछ लाभ नहीं होता था। इसलिए एक उर्दू जैन समाचार पत्र की आवश्यकता बहुत अनुभव की जारही थी। इस कमी को दूर करने के लिए जैन अनाथ आश्रम, हिस्सार, की तरफ़ से वीर सम्वत २४३४ (१९०८ सन् ईस्वी) में जैन प्रचारक उर्दू मासिक निकालने का प्रबन्ध हुआ।

बाबू ज्योति प्रसाद की आयु इस समय २५ वर्ष के लग भग थी। बाबू सूरजभान जी की संगति तथा सामाजिक कामों में भाग लेने के कारण आप मे धर्म प्रेम तथा समाज सेवा के भाव काफी जाग्रत हो चुके थे। लिखने का अभ्यास भी अच्छा हो गया था। देवनन्द इस समय जैन समाज के आन्दोलनों का गढ़ बना हुआ था। इसलिए जैन प्रचारक के सम्पादन का कार्य बाबू ज्योति प्रसाद को ही सौपा गया। और इस पत्र का पहिला अंक प्रथम मई सन् १९०८ (वीर सम्वत २४३४) को देवनन्द से निकला। इसका वार्षिक मूल्य १।) रूपया था। जैन प्रचारक का आनरेरी सम्पादक बनना, मेरे विचार मे, उनके जीवन का एक महत्वशाली समय था। पिता के अभाव के कष्ट वे जानते थे। इसलिए अनाथों का हिमायती उन से अच्छा कौन हो सकता था? इस पत्र के सम्पादन से जहां उन्हे समाज की सेवा करने का एक बड़ा मौका मिल गया, वहां उनकी योग्यता और कार्यशक्ति का अधिक विकाश होने लगा तथा उनका जनता मे मान बढ़ने लगा। इस पत्रका उन्होंने चार वर्ष तक सम्पादन किया। उर्दु भाषा जानने वाले जैनियों में, विशेष कर पंजाब और संयुक्त प्रान्त के जैनियों में, यह पत्र एक अच्छा विचार प्रवाहक बनगया। पर इसी समय

देवबन्द की तिगड़ी (T110) अधिक प्रगति शील विचारों के लिए समाज में समालोचना का विषय बन गई और जैन अनाथ रक्षक सोसायटी के कार्य कर्ताओं और बाबू ज्योति प्रसाद में पत्र की नीति के कारण मत भेद होने लगा। बाबू ज्योतिप्रसाद ने पत्र की सम्पादकी से त्याग पत्र देदिया।

भादों सुदी १० वीर सम्वत २४३६ को "जैन स्त्री समाज में धार्मिक और लौकिक शिक्षा का प्रचार करने वाले" हिन्दी मासिक "जैन नारी हितकारी" का प्रथम अंक बाबू ज्योतिप्रसाद के सम्पादन मे देवबन्द से निकला। इसका वार्षिक मूल्य १) था और इसके घाटे की पूर्ति के लिये आरम्भ में ही सौ डेढ सौ रुपये का चन्दा कुछ समाज प्रेमियों ने किया था। जैन स्त्री समाज में जाग्रति पैदा करना तथा उसमें से कुरीतियों को दूर करना ही इसके उद्देश्य थे। यह पत्र वर्ष डेढ़ वर्ष के बाद बन्द होगया।

जैन प्रचारक का प्रबन्ध तथा नीति बदल जाने से फिर एक स्वतन्त्र उर्दू पत्र की आवाश्यक्ता अनुभव होने लगी। बाबू ज्योती प्रसादके मित्रो तथा प्रसशकों ने उन्हे अपना पत्र निकालने पर जोर दिया। उनको अपनी हिम्मत और शक्ति का पता लग चुका था। १० नवम्बर सन १९१२ (वीर सम्वत २४९३) को पाक्षिक जैन प्रदीप का प्रथम अंक निकला। इस का मूल्य २) रुपय था। चौदवें वर्ष सन १९२६ मे इसे मासिक कर दिया गया। "इस पत्र के उद्देश्य अज्ञान के अन्धेरे को दूर करके हरएक के दिलो में जैन-धर्म का प्रकाश फैलाना, जैन धर्म और जैन कौम की उन्नति के

कारणों का प्रचार करना, लोगों की गलत फहमियों—भ्रमों—को दूर करना, जैन कौम मे कुरीतियों को भगाना और उनका जैन शास्त्रों के मुताबिक सुधार करना आदि २ थे।१,, जैन प्रदीप से आरम्भ मे ५००) की नकद जमानत ली गई। पर वह मई सन१६१४ में वापिस होगई। जैन प्रदीप जैन समाज मे एक बहुत अच्छा पत्र था। इसके लेखकों मे बाबू सूरजभान, बाबू ऋषभदास वकील मेरठ, बाबू दयाचन्द्र गोयलीय बी० ए०, बाबू झुम्मनलाल वकील साहरनपुर; बाबू जुगलकिशोर मुख्तार, बाबू चन्दूलाल 'अख़तर' और बाबू भोलानाथ दखेशाँ बुलन्द शहर, आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। कुछ समय सियालकोट के बाबू दीवानचन्द 'दीवाना', बाबू चन्दूलाल 'अख़तर' वकील और बाबू भोलानाथ 'दखशाँ' इसके सहायक सम्पादकों मे रहें। जैन प्रदीप में सब प्रकार के लेख निकलते थे और उसका सम्पादन अच्छा होता था। जैन समाज के समस्त आन्दोलनों को उसने शक्ति प्रदान की। इतने अच्छे पत्र की भी आर्थिक हालत कभी अच्छी नहीं हुई और हर साल उसे बन्द करने का प्रश्न सामने रहता था।

सन १९३० भारत वर्ष के राजनैतिक आन्दोलन तथा सरकारी सखती के लिए प्रसिद्ध है। इसी वर्ष मई जून के सयुक्तॉक मे "भगवान महावीर और महात्मा गाँधी" एक लेख निकला। उस पर जैन प्रदीप से एक हजार रुपये जमानत माँगी गई। जमानत देने की शक्ति उनमे कहा थी ? और यदि इसका प्रबन्ध भी कर-दिया जाता, तो आगे फिर जमानत का प्रश्न अवश्य उठता। इस

१—जैन प्रदीप प्रथम वर्ष प्र० अंक पृष्ठ २

लिए साढ़े सतरह वर्ष के बाद 'जैन प्रदीप' बन्द करदिया गया। आजतक उस कमी को पूरा करने वाला कोई अच्छा उर्दू पत्र जैन समाज में नहीं निकला। बाबू ज्योतिप्रसाद जी सम्पादक 'जैन प्रदीप' के नाम से ही अधिक प्रसिद्ध थे।

जैन प्रदीप के फ़ायल देखते समय उनके एक और पत्र का पता लगा, जिस को उन्होंने लाहौर के हाकीम भगतराम की शराकत में निकाला था। यह उर्दू सप्ताहिक 'पारस' था। इस का प्रथमांक १२ फरवरी सन् १९१५ को निकला और पौने दो महीने के बाद यह पत्र बंद होगया। इस पत्र के द्वारा बाबू ज्योतिप्रसाद देश सेवा की करना चाहते थे। पर इस में दोनों को ५००) रु० के करीब हानि हुई।

८

समाज सेवा

सामाजिक कुरीतियाँ धीरे-धीरे समाज और राष्ट्र की जड़ खोखली करके, उनके सामाजिक, धार्मिक, नैतिक और राजनैतिक उच्च आदर्शों को मिटा कर, उन्हें पतन के अन्धकारमय गहरे गड्ढे मे डाल देती हैं। आत्मिक दुर्बलता, स्वार्थ, अज्ञान और रूढियों का झूठा मोह समाज और उसके कर्णधारों को इतना नीचे गिरा देते है, कि वे इन कुरीतियो के विषैले प्रभाव को स्पष्ट रूप से अनुभव नहीं कर सकते। वे इनको प्रायः अटल, अपरिवर्तनीय और अनादि समझने लगते हैं। जो रीति-रिवाज मनुष्य समाज के हित, सुभीते और उन्नति के वास्ते कभी बनाये गए थे, समय के प्रभाव से उनके अनुपयोगी तथा हानिकारक बन जाने पर भी, उनकी रक्षा के लिये मनुष्य जाति के हितों की बलि चढ़ाई जाती है। समाज का झूठा डर और पंचायतों का कठोर शासन ही इनको स्थिर रख सकते हैं। आदमी के लिये परमात्मा, प्रकृति और राज्य के नियमों को तोड़ देना उतना कठिन नही है, जितना कठिन उनके लिये समाज की बुरी-से-बुरी

कुरीति को तोड़ना है। इसका परिणाम यह होता है, कि समाज शिक्षित बड़े आदमियों से लेकर साधारण आदमी—स्त्री पुरुष—तक-अपने हित-अहित का विचार न करते हुए, इन कुरीतियो के आगे सर झुका देते है।

सभी आदमी एकसे नहीं होते। कुछ आदमियों के हृदय मे जीवन-ज्योति जागती है, प्रकाश होता है और वे समाज के अहित को देख कर तड़प उठते है। उनकी क्रान्तिकारी, साहसी और वीर आत्माये इन कुरीतियो तथा इनके संरक्षकों के विरुद्ध निर्भय होकर आवाज उठाती है। इनमे सुधार करना या इनको सर्वथा मिटा देना ही, इनका एक उद्देश्य होता है और इस सुधार-कार्य के रास्ते में आने वाली वडी से वडी कठिनाई को वे सहर्ष सहन करते हैं। उन्हें जिन-जिन कष्टों का सामना करना होता है, उनका वे बड़ी खुशी से स्वागत करते हैं।

जब कि जैन समाज वहुत सी कुरीतियों का घर बना हुआ था और इनके कारण पतन की ओर जा रहा था, उस समय जो महापुरुष जैन समाज को इन कुरीतियों के पंजे से निकालने और समाज सेवा के लिये आगे आये, उनमे बाबू ज्योति प्रसाद का नाम एक खास स्थान रखता है। उस समय भारतवर्ष में समाज-सुधार आन्दोलन का जोर था और समाज की शुद्धि तथा नैतिक उन्नति के लिये प्रयत्न जारी था। कार्य-कर्ताओं की कमी थी। बडे आदमियों के पास ऐसे कार्यों के लिये न समय था और न सहानुभूति थी।

ज्योति प्रसाद जी एक अच्छे परिश्रमी प्रचारक

अपने लेखों, कविताओं, व्याख्यानों और रचनाओ के द्वारा समाज सुधार के संदेश को यथाशक्ति समाज में दूर दूर तक फैलाया। आपके इस प्रचार का प्रधान कार्य-क्षेत्र पंजाब और संयुक्तप्रान्त रहे। 'जैन प्रचारक', 'जैन नारी हितकारी' और 'जैन-प्रदीप' उनके मुख्य साधन थे। 'जैन प्रदीप' की सेवायें सुनहरी अक्षरों मे लिखे जाने के योग्य हैं।

आपने बाल-विवाह, वृद्ध-विवाह, अनमेल-विवाह, बहु-विवाह कन्या-विक्रय, मृत्यु-भोज, बढ़ती हुई दहेज प्रथा, बरातों की बड़ी संख्या, व्यर्थ-व्यय, वेश्या-नृत्य, अन्यायपूर्ण-पंचायती दड-विधान, जाति-बहिष्कार, ऊँच-नीच का भेद-भाव, जाति-भेद, दस्सों का पूजन अनधिकार, स्त्रियों पर अत्याचार, विधवाओ से दुर्व्यवहार, समाज मे बढती हुई विलास-प्रियता, नवयुवकों का चरित्र पतन, फैशन, नाटक, विदेशी वस्तु प्रचार, पुत्र-विक्रय आदि सभी कुरीतियों के विरुद्ध आन्दोलनों मे भाग लिया। जैन समाज मे कोई ऐसा आन्दोलन न था, जिसमे उन्होंने प्रकट या अप्रकट रूप से भाग न लिया हो। विधवा विवाह के सम्बन्ध मे उनके विचार एक अलग परिच्छेद मे दिए गए हैं।

आपने जैन समाज के इन आन्दोलनों को शक्ति प्रदान करने के लिये, अपने समय की लगभग सभी जैन तथा सार्वजनिक संस्थाओं मे किसी न किसी रूप मे यथाशक्ति भाग लिया। आपका दि० जैन महासभा, जैन महामण्डल, दि० जैन परिषद्, जैन अनाथाश्रम देहली, जैन तत्व प्रकाशिनी सभा इटावा, श्री ऋषभ ब्रह्मचर्याश्रम हस्तिनापुर, जैन शिक्षा प्रचारक

समिति जयपुर, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, जैन औषधालय सहारनपुर, श्री सार्व धर्म परिषद्, जैन बोर्डिङ्ग हाउस मेरठ, हस्तिनापुर क्षेत्र प्रबन्ध कमेटी, जैनेन्द्र गुरु कुल पंचकुला, जीव दया प्रचारिणी सभा आगरा आदि अनेक संस्थाओं से गहरा सम्बन्ध था। आपने जैन अनाथाश्रम के पत्र जैन प्रचारक के सम्पादक, हस्तिनापुर क्षेत्र मेला कमेटी के सभापति, जैन बोर्डिंग हाउस मेरठ के असिस्टण्ट, सुपरिन्टेन्डेन्ट और जैनेन्द्र गुरुकुल पचकूला की प्रबन्धक और कार्य-कारिणी समिति के प्रतिष्ठित सभासद और मृत्यु काल तक आनरेरी ज्वायट सेक्रेट्री (Hon. Joint Secretary) के पदों को भी कुछ समय तक सुशोभित किया।

आप मे एक और सराहनीय विशेषता थी। बहुत कम सुधारक और नेता अपने नगर मे ठोस काम करते है और सर्व-प्रिय होते हैं। इससे बडी हानि होती है। अपन शहर मे उनसे काम होता नहीं, बाहर वे ठहर कर काम कर नहीं सकते। आवश्यकता इस बात की है कि कार्य-कर्तागण अपन-अपने नगरों और आस-पास के कार्यक्षेत्रों मे काम करे। बाबू ज्योतिप्रसाद जी देवबन्द के जैनों तथा अजैनों मे बहुत ही प्रिय थे और वहाँ के समस्त आन्दोलनों मे उनका पूरा सहयोग होता था। आज जो भी जागृति वहाँ हो रही है, वह बहुत कुछ आपके ही कामों का फल है। देवबन्द मे कोई पुस्तकालय न था। आपने अपने मकान पर ३१ मई सन् १९२० को कुछ नवयुवकों को एकत्रित करके भ्रातृ मण्डल पुस्तकालय की नींव डाली। यह पुस्तकालय अब अच्छी उन्नति कर रहा है। आप अपने स्वभाव, चतुरता,

प्रेम और उपयोगिता के कारण देवबन्द मे एक आवश्यक आदमी बन गए थे।

निर्धन छात्रों का तो आपको बहुत ख्याल था। शिक्षा-प्रेमियों से उनको छात्रवृत्ति दिलाना और कभी-कभी स्वय भी छात्रवृत्ति देना आप अपना कर्तव्य समझते थे। आपने अपने छोटे भाई स्वर्गीय ला० जयप्रकाश की स्मृति मे ५००) रु. देकर "जयप्रकाश छात्र-वृत्ति फंड" स्थापित करना चाहा। केवल बाबू बलवीर चन्द जी ऐडवोकेट और रईस, मुजफ्फ़र नगर, ने उस फड मे १००) रुपये देने का बचन दिया। बाकी समाज ने इसकी तरफ कोई ध्यान न दिया। समाज यदि चाहती तो इस बहाने से निर्धन छात्रों की सहायता के लिये एक अच्छा फड तैयार कर देती, जिससे दी हुई छत्रवृत्ति का क्रम जारी रह सकता था। समाज की इस उपेक्षा सेउनको बड़ा खेद हुआ और समाज की बेकद्री को देख कर उनके हृदय को बड़ा धक्का लगा।

आपके सामाजिक विचार इस पुस्तक को पूरा पढ़ने सें स्पष्ट रूप से प्रगट हो जायेंगे। आप किसी नवीन विचार को एकदम ग्रहण नहीं करते थे। खूब सोच-समझ कर उसे अपनाते थे। अपने विचारों को प्रगट करने का ढंग आपका अपना ही था। सरलता और नम्रता का तरीका आपने अपनाया हुआ था। उग्रता तथा तेज़ी आप मे नाम को न थी। इस लिये पुराने ख्याल के जैनियों मे आप मिल-जुल लेते थे और आपका उतना विरोध नहीं हुआ, जितना कि बाबू सूरजभान जी आदि का हुआ। इसका एक कारण यह भी था, कि आप शास्त्रों के विद्वान न होने के

कारण जनता के धार्मिक सिद्धान्तों और मान्यताओं—ठीक और भ्रमपूर्ण—की कोई विशेष आलोचना नहीं कर सकते थे और न करते ही थे। परन्तु इसका यह अर्थ कभी नहीं हो सकता कि आप पुराने विचार के जैनियों की कड़ी समालोचनाओं और कटाक्षों से बचे रहे हों।

आपने १६ वर्ष की आयु से लेकर मरते समय ५४ वर्ष की आयु तक निरन्तर समाज-सेवा की, जो कि एक ख़ास बात है। बिना किसी दृढ संकल्प, सच्ची लगन, समाज प्रेम, दिली दर्द, तथा ऊंची भावना के इस प्रकार समाज तथा धर्म सेवा में जीवन बिताना कठिन बात है। इसी समाज सेवा मे आपकी महानता है। धर्म और समाज के लिये आपके समान सर्वस्व निछावर करने वाले महापुरुष समाज मे कम ही है।

६

धर्म पालन और धार्मिक विचार

आदमी के धार्मिक विचारो पर उसके युग और आस पास के वातावरण का बड़ा प्रभाव पडता है। संगति, शिक्षा तथा दीक्षा और संस्कारों से धार्मिक विचारो मे बड़ा भेद पड़ जाता है। यही कारण है, कि एक घर मे भी आदमियो के धार्मिक विचारों मे भेद पाया जाता है। परचलित रूढ़ियों, अन्ध विश्वासों, क्रिया कांडों और सामाजिक रीतियों के विरुद्ध बोलने वालों तथा उनमें कुछ सुधार चाहने वालों को तो संसार के किसी भी भाग मे किसी समय पसन्द नही किया गया। उन्हें नास्तिक, धर्म लोपक, धर्म को मलिया मेट करने वाले तथा लामजहव तक कह दिया गया। चाहे उन सुधारकों की बातें शास्त्रों और प्राचीन गुरुओं के उपदेश के सर्वथा अनुकूल तथा युक्ति पूर्ण ही क्यों न हो।

बाबू ज्योतिप्रसाद पूरे सुधारक थे, जैन-समाज के प्रसिद्ध सुधारक बाबू सूरजभान वकील के प्रभाव मे थे और उनके साथी थे। इसलिए उन्हे भी पंडितो के उन सब आक्षेपों का निशाना बनना पड़ा, जो कि बहुत करके सूरजभान पर किए जाते थे। अब देखना है, कि आपके धार्मिक विचार क्या थे। धार्मिक जागृति और पूर्वी तथा पश्चिमी सभ्यताओं के सघर्ष के युग मे वे हुए थे। नवीन विचारों को उन्होंने पत्रो मे पढ़ा था, छपे शास्त्रा के स्वाध्याय से धर्म के मर्म को समझा था। इन बातों से अधिक वे एक कवि थे। कवि का भावुक हृदय तथा कल्पना-

शील मस्तिष्क उन्होंने पाया था। इसलिए यह आवश्यक था, कि अपने युग के परचलित अपरीक्षित तथा रूढिसमान सख्त अंधविश्वास और कोरे क्रियाकाँड उन्हे साफ तौर से वे जान, निरर्थक, दिखाई दिए। और जिस ढंग से विना सोचे समझे तथा बिना समझाये वे क्रियायें की जाती थीं, उनको ठीक मानना, और वैसे ही करना उनके लिए कठिन था। वे धर्म के प्रभाव को जनता और नवयुवकों में कम होता देख रहे थे। इसलिए वे चाहते थे, कि धर्म का प्रचार ऐसे साधनों से तथा युक्ति पूर्ण ढंगों से किया जाय, कि जनता और लिखे पढ़े आदमी धर्म और धार्मिक क्रयाओं के रहस्य को समझ जांय और फिर उन पर चलें। वे नहीं चाहते थे, कि 'वावा वाक्यं प्रमाणम्' या भेड़ों के समान पंडितों के पीछे चल कर धर्म को माना जाय। इसलिए उनके व्याख्यान और लेख इन्हीं विचारों का प्रचार करने के लिए होते थे। और इसका यह फल होना आवश्यक था, कि 'गुरुडम' की जड़ें कटें तथा जनता का विश्वास इन बनावटी क्रिया काँडों पर से उठे। वे मन्दिरों में अधिक वीतरागता और सादगी लाना चाहते थे। अंधा धुन्ध वेदी प्रतिष्ठायें करने विना जरूरत मन्दिर बनाने, धर्म को अपनी पैतृक सम्पत्ति समझने, सबको धर्म पालन करने के उचित साधन न देने, वर्तमान जाति भेद को अनादि तथा सर्वज्ञकृत मानने के वे सर्वथा विरोधी थे। वे विवाह सम्बन्धी कुरीतियों को दूर करने के पक्ष में थे और तमाम आयु इन्हीं बातों का उन्होंने प्रचार किया यह पूछा जा सकता है कि इनमें से कौन सी बात शास्त्र विरुद्ध तथा युक्ति के विरुद्ध है?

अब धर्म के विधेयात्मक पहलू (positive side) को लीजिये। वे स्वयं नियम पूर्वक देव दर्शन, स्वाध्याय और जाप करते थे। दुबारा विवाह न करके ब्रह्मचर्य पर पूर्ण जीवन व्यतीत किया। बहुत से जैन तीर्थ क्षेत्रों की यात्रायें की। प्रेम, सेवा, दया, परोपकार आदि गुणों को उन्होंने खूब अपनाया। आध्यात्मिक कवितायें तथा प्रार्थनायें लिखीं। ये सब बातें धर्म श्रद्धा और सच्चे धार्मिक भावों की द्योतक हैं। अगर ऐसे आदमी को दल बन्दी के पक्ष पात मे नास्तिक और धर्म का शत्रु कहा जाय या माना जाय, तो यह बडा अन्याय है। एक बार का ज़िक्र है, उनका विचार रथोत्सव करने का हुआ। उस समय उनकी अधिक आयु न थी। वे देव बन्द के बहुत से आदमियों के पास गये। पर उन्हे नवयुवक और ग़रीब समझ कर, सबने उनकी बात को टाल दिया। वे घर आकर अपनी माता के पास खेद करने लगे। माता ने उन्हे समझाकर शान्त किया। दो तीन वर्ष परिश्रम करके, इन्होंने कुछ रुपये जमा किए। और फिर रथोत्सव किया।

यहाँ ये सब बातें आज यूं ही नहीं लिख दी गई हैं, वरन इस पुस्तक के दूसरे और तीसरे खंडों मे बाबू ज्योतिप्रसाद के लेखों और कविताओं से व्यक्त होंगी।

आप अच्छे धर्म पालक थे और बहुत से नाम धारी धर्मात्माओं से धर्म को अधिक समझते थे और अपने दैनिक जीवन में धर्म पर चलते थे। उनका धार्मिक व्यवहार बनावटी, दिखावटी, अथवा अन्ध विश्वास को लिये हुए न था, बल्कि वास्तविक था।

१०

विधवा विवाह और बाबू ज्योतिप्रसाद

जैन समाज में विधवा-विवाह का प्रश्न काफी पुराना है। लाहौर के बाबू ज्ञानचन्द सम्पादक 'जैन-पत्रिका' ने इसके पक्ष में अपनी पत्रिका मे कई लेख लिखे। उसके बाद बाबू सूरजभान, बाबू दयाचन्द गोयलीय सम्पादक 'जाति प्रबोधक' बाबू चन्द्रसेन वैद्य इटावा, पं० उदयलाल काशलीवाल, बाबू विश्वम्भर दास गार्गीय झाँसी, पं० नाथूराम जी प्रेमी, पं० दरबारीलाल सम्पादक 'जैन-जगत' और सुप्रसिद्ध ब्रह्मचारी शीतलप्रसाद, बाबू भोलानाथ, श्री० कस्तूरचन्द और ला० जौहरीमल जी, आदि ने इस आन्दोलन को काफी शक्ति प्रदान की। जैन-पत्रिका, जाति-प्रबोधक, सत्योदय, जैन-हितैषी, जैन-जगत, सनातन-जैन आदि पत्र इस आन्दोलन के प्रचारक थे। अब तो यह आन्दोलन सर्वथा जड़ पकड़ गया है और जैन-समाज मे विधवा-विवाह धड़ाधड़ हो रहे हैं। न उन पर पहिले सा ऐतराज़ है और न विधवा-विवाह करने वालों के लिये वैसी कोई खास रुकावट है।

पर जैन-समाज मे एक समय था, और अब भी कहीं-कहीं वही पुराना युग है, जब कि विधवा-विवाह का नाम भी जबान पर लाना पाप और अपराध समझा जाता था। जनता इसके बारे में कुछ सुनने को तैयार न थी। समाज के अन्दर दस-बीस ऐसे कट्टर स्थिति पालक पंडितों और सेठों का एक दल था, जो अच्छे से अच्छे कार्यकर्ता, विद्वान, त्यागी और प्रतिष्ठित व्यक्ति को विधवा-विवाह का पक्षपाती कह कर या बदनाम कर उसके सार्वजनिक जीवन को मलियामेट कर देने का यत्न किया करता था। जिन संस्थाओं से उनका सम्बन्ध होता था, यह दल वर्ष दो वर्ष के विरुद्ध प्रचार से उन सस्थाओं को मिटा देना अपने बाँये हाथ का काम समझता था। इस दल की इतनी धाक बैठी हुई थी, कि सभाये, पचायतें, समाचार पत्र और बडे से बड़े नेता भी इस प्रश्न पर जबान बन्द कर लेते थे। विचारों का अच्छा खासा दमन था। हिन्दी जैन गजट तथा खंडेलवाल जैन हितेच्छु आदि पत्र इस विरोध के अगुवा थे।

बाबू ज्योतिप्रसाद के इस प्रश्न पर क्या विचार थे? यह एक बड़ा प्रश्न है। उनके विचारों तथा नीति के सम्बन्ध में बहुत से आदमियों को सन्देह रहा है और बहुत से आदमी उनको इस विषय मे ठीक रूप से नहीं पहिचान सके। इस प्रश्न सम्बन्धी आपके विचारों पर बाबू सूरजभान, बाबू ऋषभदास और उनकी स्वाभाविक दुर्बलता का बड़ा प्रभाव पड़ा है। बाबू सूरजभान के विचारों तथा संगति के कारण वे विधवा-विवाह के हृदय से समर्थक थे, और यही कारण है, कि कभी किसी लेख मे या

व्याख्यान मे उन्होंने विधवा-विवाह का विरोध नहीं किया। बल्कि अपने पत्र मे बाबू सूरजभान और बाबू झूमनलाल एम० ए० वकील के लेख विधवा-विवाह के पक्ष मे बराबर निकाले। बाबू ऋषभदास विधवा-विवाह के आन्दोलन को असामयिक (Untimely) समझते थे और उनका विचार था, कि विधवाओं की वृद्धि, वृद्ध-विवाह, बाल-विवाह आदि कारणों को रोका जाय तथा इस प्रश्न पर समाज की शक्ति को खराब न किया जाय। बाल-विधवाओं के विवाह के वे हृदय से पक्ष मे थे, पर बाबू ऋषभदास जी ने अपने इस विचार को भी कभी साहस करके प्रगट नहीं किया, वरन् विधवा-विवाह का विरोध किया। बाबू ऋषभदास के ऐसे लेख भी 'जैन प्रदीप' मे बराबर निकलते रहे। बाबू ज्योति प्रसाद का ढंग और कार्य-नीति भी कुछ ऐसी ही रही। उन्होंने भी बार-बार विधवा-वृद्धि के कारणों को दूर करने के लिये लिखा। पर बाबू ऋषभदास के समान उन्होंने विधवा विवाह का विरोध कभी नहीं किया। बाबू ज्योति प्रसाद के चरित्र मे एक खास बात 'लोकेषणा' थी यानी जनता मे प्रिय तथा प्रसिद्ध बनने की इच्छा थी और विधवा-विवाह का समर्थन या विरोध करने से उनके सच्चे भाव तो प्रगट हो जाते, पर वे एक पक्ष को अवश्य खो बैठते। यही उनकी कमज़ोरी थी। मैं इसको नीति कहने को तैयार नहीं, इसे उनकी बुज़दिली कहना अधिक ठीक होगा। उनके इस दुतर्फ़ा व्यवहार के कारण दोनों पक्षों मे वे अप्रिय से बन गए।

६, ७ मई सन १९२७ को 'सनातन जैन समाज' का प्रथम

वार्षिक अधिवेशन बाबू सूरजभान जी के सभापतित्व में अकोला में हुआ था। बाबू ज्योतीप्रसाद इस में जाना चाहते थे, परन्तु स्वास्थ्य अच्छा न होने के कारण वे आकोला की लम्बी यात्रा करने के योग्य न थे। पर सनातन जैन समाज के बारे में प्रदीप में उन का स्वलिखित नोट उन के हार्दिक भावों को अवश्य प्रकट करता है। उस का कुछ अंश पाठक देखें:-"सनातन जैन समाज का उद्देश्य केवल विधवा विवाह का प्रचार करना ही नहीं है, बल्कि जैनधर्म का सच्चे रूप में प्रचार करना और समाज की हर तरह से बहबूदी (उन्नति) और बहतराई के साधनो पर अमल करना भी है। सनातन जैन समाज का काम अगर इसही रफ़्तार से चलता रहा, तो आशा है कि यह जरूर जैन समाज में समय के अनुसार परिवर्तन करदेगा। अगर समय के अनुसार परिवर्तन हो गया, तब जैन धर्म का सितारा भारत वर्षके आकाश मण्डल पर चमकता हुआ नज़र आयेगा। इस सभा का मेम्बर (सदस्य) हरएक जैनी को होना चाहिये और सच्चे हृदय से काम करना चाहिए। ब्रह्मचारी जी (ब्र० सीतल प्रसाद जी) अपने प्रयत्न मे सफल हों, ऐसी हमारी भावना है। बाबू सूरजभान सभापति का भाषण हमे मिल गया है। बडा ही दलेरी के साथ लिखा गया है। हमारा इरादा है, कि इस का उर्दु अनुवाद विचार के उद्देश्य से पाठकों के रूबरू पेश करे।*"

पर सन् १९२८ की २३ जनवरी को उन्होंने मुझे एक पत्र लिखा जिसमे एक वाक्य यह है "विधवा विवाह का मजमून

*जैन प्रदीप वर्ष १७, अंक ५, पृष्ट ३४।

(लेख) जैन प्रदीप में शाया (प्रकाशित) न करूंगा। इस के लिए अभी मुआफी चाहताहूँ।" इसके बाद जैन प्रदीप मे विधवा विवाह के समर्थन या विरोध मे मे कोई लेख नहीं मिलता। एक बार फिर इस प्रश्न पर कुछ लेख लिखवाने का आपका विचार हुआ था। परन्तु फिर जैन प्रदीप ही बन्द हो गया।

ऊपर की बातों का यही सार है कि आप विधवा विवाह के पक्ष मे जरूर थे, परन्तु प्रकट रूप से उसके अनुकूल बोलने, लिखने या अपने विचारों को अमली जामा पहिनने मे हिचकते थे। और अपनी किसी प्रतिष्ठा मे धक्का लगने की जोखम को उठाने को तैयार नहीं थे।

११

विरोध
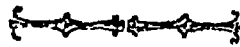
सुधार का मार्ग विरोध के दांतों मे से होकर गुजरता है। संसार में कौन ऐसा सुधार कार्य है, जिसका हंसी मजाक न उड़ाया गया हो और जिसका विरोध और दमन न किया गया हो शक्ति-पूर्ण प्रचार और हितकर प्रमाणित होने पर उन्ही सुधारों को जनता ने देर या सवेर मे अपनाया है। जैन समाज के अन्य सुधारकों के समान बाबू ज्योतिप्रसाद भी विरोध से न बच सके। मध्यम मार्ग को ग्रहण करके और अत्यत प्रेम पूर्ण स्वभाव रखते हुए भी, आपका सम्बन्ध बाबू सूरजभान की पार्टी से होने तथा वैसे ही विचारों का नरम शब्दो मे प्रचार करने के कारण आपका विरोध होना भी अनिवार्य था। "धर्म चला" "धर्म डूबा" "धर्म को मिटाया जा रहा है" इस प्रकार चिल्लाने वाले पण्डित दल की नजर आप पर कैसे न पड़ती ? यदि आपके पत्र हिन्दी मे होते, तो मेरे विचार में यह विरोध और तीव्र हो जाता।

एक बार सम्पादक हिंदी जैन गजट ने आपकी समालोचना करते हुए आपको 'नास्तिक' लिख दियाथा। आपने पण्डित जी को रजिस्टर्ड नोटिस देकर नास्तिक होने का प्रमाण मांगा था।

सहारनपुर मे जैनबालबोधिनी सभा के जलसे पर एक प्रस्ताव के द्वारा जैन प्रदीप में धर्म विरुद्ध (!) निकलने वाले लेखों का जवाब देने के लिये 'जैन पत्र समालोचक' कमेटी स्थापित की गई थी। जिसके कार्य-कर्ता सहारनपुर के बडे बडे प्रतिष्ठित आदमी थे। पर इस सभा ने भी जैन प्रदीप* के किसी लेख का उत्तर किसी जैन पत्र या ट्रैक्टद्वारा नही दिया।

हिंदी जैन गजट अंक ३५ (२३ जूलाई सन् १६२३) मे उसके प्रकाशक ने "पजाव प्रान्त के जैन भाई ध्यान दे।" लेख मे पंजाब और सहारनपुर, फीरोजपुर, मेरठ आदि के जैनियों से अपील की थी, कि वे जैन प्रदीप को न पढ़ें क्योंकि यह (पत्र) जैन धर्म के विरुद्ध लेख लिखता है और उनके (बाबू ज्योतिप्रसाद के) विचार धर्म से गिरे हुये हैं×।

इस प्रकार के दमन मय प्रचार से जैन समाज के कितने पत्रों और कार्य कर्ताओं को दवाने का प्रयत्न किया गया है, यह लिखते हुये हृदय कांपता है। इस प्रकार के आन्दोलन का न बाबू ज्योतिप्रसाद पर और न जैन प्रदीप पर कुछ प्रभाव पड़ा, कारण कि जैन प्रदीप के पाठक अधिक उन्नति शील विचारों वाले थे। इस विरोध के बाद भी 'प्रदीप' सात आठ वर्ष चलता रहा और बा० ज्योति प्रसाद जैन समाज की सभाओं मे सम्मानित रूप से आते जाते रहे। विरोध और बायकाट की छाप लगजाने से निसन्देह आपका नाम सुधारकों की श्रेणी मे कुछ ऊंचा होगया है।

---

*जैन प्रदीप वर्ष १०, अंक २१—२२, पृष्ट ३१।

×जैन प्रदीप वर्ष ११, अंक १२—१३, पृष्ठ ६

१२

रचनायें

धर्म प्रचार और समाज उन्नति के उच्च भावों से प्रेरित होकर, बाबू ज्योति प्रसाद ने व्याख्यानों और पत्रों के अतिरिक्त कविताओं, ट्रेक्टों और पुस्तकों द्वारा भी समाज की बड़ी सेवा की है। आपने हिंदी और उर्दु, गद्य और पद्य मे छोटी बड़ी सब मिलाकर निम्नलिखित कुल २५ पुस्तकें लिखीं, जिन में छोटी पुस्तिकाओं ही की संख्या अधिक है:—

१—धर्म की रक्षा का उपाय (स्वदेशी कपड़ों के प्रचार का सन्देश)।

२—वैश्य कौम की हालत का फोटू (उर्दु कविता)।

३—मोहजाल (उर्दू)।

४—नित्य प्रार्थना [कविता]।

५—मैं कौन हूँ।

६—लड़कों को बेचने का ड्रामा।

७—दिल किससे लगायें [धर्म से]।

८—सुन्दर लाल [नवयुवकोपयोगी कहानी]।

९—सुख कहा है ?

१०—सुख कहां है [उर्दू]

११—सृष्टि कर्तृत्व मीमांसा [कविता]।

१२—ज्योतिप्रसाद भजन माला।

१३—काया पलट [सामाजिक उपन्यास]

१४—जैन शास्त्रोच्चार।

१५—बाबू ऋषभदास जी के पवित्र जीवन की झलक

१६—गृहस्थ जीवन की शिक्षा

१७—रूहानी तरक्की का राज़ [उर्दू]।

१८—बारह भावना।

१९—संसार दुख दर्पण [कविता]

२०—सादगी और बनावट।

२१—प्रिय बालकों को शुभ सन्देश।

२२—अनमोल मोती [संग्रह]।

२३—विवाह के समय पुत्री को शिक्षा और आशीर्वाद।

२४—शील कथा।

२५—किसान की झोंपडी।

२६—उलट फेर (अधूरा अप्रकाशित सामाजिक उपन्यास)

जैन कवि ज्योतिप्रसाद सदा किसी उद्देश्य को सामने रखकर ही लिखते थे, और उनकी प्रायः सभी पुस्तकें उपदेश रूप मे हैं। समाज सुधार, सुख शान्ति प्रचार, कुरीति निषेध, चरित्र गठन और आध्यात्मवाद ही आपके उद्देश्य थे। समाज की पतित अवस्था. नवयुवकों की फैशन परस्ती, पंचायतों के अत्याचार, स्त्रियों पर होने वाले अत्याचार और देश की निर्धनता से आप दुखी थे। आप चाहते थे, कि देश और समाज की उन्नति हो। इस लिए आपने जीवन भर यथा शक्ति लिखा। यद्यपि आपकी पुस्तकें

का प्रचार अधिकतया जैन समाज मे ही रहा है, पर उनमें से बहुत सी सर्वोपयोगी हैं और अजैन जनता भी उन्हें बड़े प्रेम से पढ़ती थी।

न बाबू ज्योति प्रसाद तत्वज्ञान और जैनदर्शन के पंडित थे, और न सामाजिक समस्याओं के विद्वान। परन्तु आप अनुभवी सहृदय और कल्पनाशील थे। आस पास की दुर्दशा आप पर अपना प्रभाव किये बिना न रहती थी। गली मुहल्ले, शहर और देहात की अवस्था आप से छिपी न थी। बस, कवि की आत्मा को प्रेरित करने के लिए यह काफ़ी था। यही कारण था, कि आपने 'काया पलट' सामाजिक उपन्यास और 'ससार दुख दर्पण जैसी कविता लिख दी। आप सामाजिक कुरीतियों पर बड़ी युक्ति के साथ लिखते थे।

उन विद्वानों और पंडितों से आप लाख दरजे अच्छे थे, जो जनता के दुखों को दूर करने के लिये कुछ भी नहीं लिखते।

आप उच्चकोटि के लेखक न थे। साधारण लेखकों मे आप का स्थान था। परन्तु जिस समाज से साहित्य तथा कला-प्रेम प्रायः उठ सा गया हो, उसके लिये आप भी कम न थे।

जो कुछ आप मे श्रेष्ठ, उच्च और सुन्दर था, वह सब आपने पुस्तकों मे भर दिया। इसके अतिरिक्त आपकी रचनायें वास्तविकता को लिए हुए हैं, और अपने युग का प्रतिनिधित्व करती हैं। वे सामाजिक अत्याचार के विरुद्ध बड़ी ललकार हैं। इसी बात मे उनका महत्व है।

आपकी भाषा सरल थी और उसे साधारण लिखा पढ़ा आदमी भली प्रकार समझ सकता है। यही उसकी विशेषता है। यह हिंदी

उर्दू मिश्रित भाषा है, जैसी कि मेरठ, सहारनपुर आदि जिलों में बोली जाती है। इसी बोली को ठेठ हिन्दुस्तानी कहा जा सकता है।

आप के लिखने की शैली युक्ति तथा दृष्टात पूर्ण होती थी और पढ़ने वाले के हृदय पर शीघ्र अपना प्रभाव कर देती थी। उन की शैली मे पुनरूक्ति का दोष अधिक था। आप एक ही बात को समझाने के लिए बार बार बहुत से उदाहरण देते थे।

उनकी पुस्तको की कोई समालोचना यहॉ देना आवश्यक नहीं है। छोटे ट्रेक्टों की समालोचना भी क्या? पर उनकी समस्त पुस्तकों मे 'काया पलट' उपन्यास, "सृष्टि कर्तृत्व मीमासा" और "संसार दुखदपण" अच्छी तथा उपयोगी चीजें है। कुछ कवितायें भी अच्छी हैं। मेरा ख्याल है कि इन मे से कई साहित्य मे स्थायी स्थान पॉयेंगी।

'काया पलट' २३६ पृष्ठ का सामाजिक उपन्यास है और इसे उन्होंने २१ दिन मे ही पूरा कर दिया था। रात दिन इतना परिश्रम किया, कि स्वास्थ्य खराब होगया। इसकी भूमिका स्वर्गीय लाला कान्नोमल जी एम० ए०,जज रियासत धौलपुर, ने लिखी थी।

'संसार दुख दर्पण' के लिखे जाने की बात कुछ दिलचस्प सी है। एक दिन शाम को बाहर बैठे कवि भूधर दास का कोई दोहा उन्हे याद आगया। उस पर कुछ विचार किया, और रात के दस बजे से तीन बजे तक बैठकर ७० पद्यों मे 'संसार दुख दर्पण' तय्यार कर दिया। इसके अंत मे एक सुन्दर भजन "समझ मन स्वार्थ का ससार" सात पद्यों मे लिख दिया। 'संसार दुखः दर्पण' जैन समाज मे इतनी प्रिय हुई ? कि थोड़े ही समय में उसकी बीस हजार प्रतिया बंट गई। ———

आप अपनी पुस्तकों को छपवाने और बांटने के लिए दानी महानुभाव फ़ौरन तलाश कर लिया करते थे।

बाबू ज्योतिप्रसाद 'जैन कवि' के नाम से प्रसिद्ध थे। आप बचपन से ही तुकबन्दी करने लगे थे। जब कुछ कविता प्रेम बढ़ा, तब आप भजनों को अपने अध्यापक पं० झुन्नी लाल जी को दिखाने लगे। बाद मे नानौते के पंडित मंगत राम जैन से अपनी कवितायें ठीक कराने लगे। हिंदी 'जैन गज़ट' में वे कवितायें छपने लगीं। आपकी कविताओं से प्रसन्न होकर आपको प्रोत्साहन देने के लिये दिगम्बर जैन महासभा ने कुण्डल पुर के अधिवेशन में सन् १६०७ में आप को "जैन कवि" की उपाधि प्रदान की। अच्छे और उच्च कोटि के कवियों के अभाव में आप का यह सम्मान होना अनिवार्य ही था। जिस धर्म के अनुयाइयों मे संस्कृत, प्राकृत, कनाडी और हिन्दी के बड़े बड़े सैंकड़ों कवि हुए हैं, उन में कवियों का अभाव बड़ा खटकता है।

आपकी कविता के बारे मे वह आदमी क्या लिख सकता है, जो न स्वयं कवि है और न जिसे छंदों का ज्ञान है? कुछ कवितायें कोरी तुकबन्दी है। कुछ बहुत ही लम्बी और अरुचिकर हैं। उन सब को इस पुस्तक मे नहीं दिया गया है। फिर भी ऐसी कवितायें काफ़ी है, जो अच्छी हैं, पाठनीय हैं और संग्रह के योग्य हैं। एक समाज प्रेमी की कृति नष्ट न हो, और जनता उन से कुछ आत्मिक शांति प्राप्त कर सके, इसी सदुद्देश्य से उन्हें यहाँ एकत्रित कर दिया गया।

१३

सामाजिक कामों से जुदाई और स्वर्गवास

जून सन् १९३० में जैन प्रदीप के बन्द हो जाने पर, बाबू ज्योतिप्रसाद जी जैन समाज के कार्य क्षेत्र से बहुत कुछ अलग होगये। परन्तु इसके पाश्चात भी आप जैनेन्द्र गुरुकुल पंचकूला के प्रबन्ध में हाथ बटाने और अन्य सस्थाओं तथा सभाओं के अधिवेशनों पर व्याख्यान देने का काम करते रहे। पुत्र विक्रय के विरुद्ध एक छोटा सा ड्रामा और कुछ कविताएं भी लिखीं। सेठ ज्वालाप्रसाद जी के स्वर्गवास के पश्चात और घर में मृत्यु पर मृत्यु होने से सामाजिक कार्यों से आपकी दिलचस्पी कम हो गई। जिस आदमी ने इतनी आयु तक समाज सेवा की हो, वह सर्वथा पूर्ण रूप से तो कभी अलग नहीं हो सकता।

नवम्बर सन् १९३६ मे आप बीमार पड गये। आपको जिगर की बीमारी हुई और हृदय दुर्बल हो गया। फिर आप के पावों पर सूजन हो गया और आप जलोदर रोग से भी ग्रसित होगये।

इस तमाम काल मे आपका काफी इलाज किया गया, पर आराम न हुआ। समस्त बीमारी में आपको कभी यह ख्याल न आया, कि यह बीमारी आपके लिए घातक प्रमाणित होगी। सात महीने की बीमारी मे अच्छे से अच्छे दृढ़ स्वभाव वाले आदमी अधीरों और चिड चिड़े स्वभाव वाले हो जाते हैं। परन्तु आपकी शांति और धैर्य मिलने वालों को चकित कर देती थी। मृत्यु की गोद में होते हुए भी, इतना दृढ रहना महान धैर्य का द्योतक है। केवल अंतिम दिन आपको अपना अंतिम काल समीप ज्ञात हुआ। फिर भी न कुछ घबराहट थी और न हृदय-व्यथा। वे अपना जीवन अत्यन्त उत्तम काम मे लगा चुके थे। और आपको दुनिया के झगट का कोई दुखदायक मोह न था। इस समय तमाम घर मे एक अप्रकट अनिष्ट का भय छा रहा था। जवानें बंद थीं, पर हृदय और आंखें आपस में बातें कर रही थीं। उंगलियों के सकेतो से काम हो रहा था। घर में निस्तब्धता छाई हुई थी। माता, भतीजी और भतीजा सब पास थे। आदीश्वर, पन्द्रह वर्ष का भतीजा, इस हृदय विदारक दृश्य को सहन न कर सका। वह रो उठा। शांति और धैर्य का उपदेशक फिर कहने लगा, "बेटा! तुम बावले हो। तुम सब योग्य हो। तुम तो १५ वर्ष के हो। जब मेरे पिता का देहान्त हुआ था, मैं ७ वर्ष का था।" बालक का मुंह बंद करने के लिए ये शब्द काफी थे। पर उसका हृदय तो इन शब्दों को निरर्थक समझ कर फिर भी रो रहा था।

विक्रम संम्वत् १९९४ का ज्येष्ट था। २८ मई १९३७ तिथि अमावस और शुक्र वार का दिन था। रात के साढ़े नौ बजे थे।

रात का समय और रात भी अमावस की अंधेरी रात, अंधेरी रातें बहुत आती हैं। पर वह रात 'प्रेमभवन' देवबन्द और जैन जगत के लिये सच मुच काल रात्रि बन गई। प्रेम भवन की ज्योति विलुप्त हो गई। भवन में अंधेरा छा गया और वह खाली हो गया। माता गोपी देवी का संसार फिर वैसा ही बन गया, जैसा कि बहुत पहले था।

उसी समय यह हृदय विदारक समाचार बिजली की तरह समस्त देवबन्द में फैल गया। मित्र और स्नेही बुझी हुई ज्योति के दर्शन करने के लिये आँसुओं की प्रेम भेंट लेकर प्रेमभवन के सामने एकत्रित हो गये थे। गुणों तथा इस भयंकर वज्रपात पर कानाफूसी होने लगी। कुछ बड़े बूढ़े आगे आये और जनता को उनका कर्तव्य सुझाकर, मनुष्य की 'विनाशमान प्रकृति का बोध करा कर अंतिम संस्कार की तय्यारी करने लगे। तभी उसी रात को आपका दाहकर्म कर दिया गया।

किसी कार्य कर्त्ता के जीवन काल में या उसकी मृत्यु के फ़ौरन पीछे, उसके काम का और उसके प्रभाव का अनुमान लगाना कठिन है। राग और द्वेष रहित दृष्टि कोण से अनुमान कुछ समय के बाद ही लगाया जा सकता है। परन्तु जैन कवि ज्योतिप्रसाद के काम और समाज सेवायें ऐसी थीं, कि उन का प्रभाव आज भी दृष्टि गोचर हो रहा है। आपने एक उर्दू जैन पत्र को सफल रूप से सम्पादित तथा प्रकाशित करके जहां उर्दु लिपी जानने वाले जैनियों में धर्म प्रचार तथा सुधार कार्य किया, वहाँ इस भाषा में काम का द्वार भी खोल दिया। आपके प्रोत्साहन से जैन समाज

मे बहुत से लेखक और कई सम्पादक बन गये। पंजाब और संयुक्त प्रॉन्त मे आपने काफी जागृति फैलाई। आपके व्यक्तित्व के प्रभाव तथा उपदेश से सैकड़ों नवयुवकों के जीवन बन गए। जिन सामाजिक कुरीतियो के विरुद्ध अन्य नेताओ के साथ आपने आवाज उठाई, उनकी जड़ें खोखली होगई। आपने खड़ी बोली मे कविता करके जैन समाज मे इस तरफ जनता की रुचि फेरी। इन सब बातो से बड़ी बात यह है, कि आपने साधारण स्थिति मे होते हुए भी, दृढ़ संकल्प करके निस्वार्थ भाव से जीवन भर तन, मन, धन से समाज सेवा करके समाज के सामने एक बहुत ऊंचा आदर्श स्थापित कर दिया। यह काम मामूली न था। समाज और धर्म के लिए अत्यन्त अधिक प्रेम रखने वाला आदमी ही इतना बड़ा त्याग कर सकता है। उनका त्याग और सेवा देश के सैंकड़ो नवयुवकों को पथप्रदर्शक का काम देगा। आत्मसेवा के युग में यह कोई छोटी बात नहीं है।

१४

औरों की दृष्टिमें ज्योतिप्रसाद

किसी आदमी को ठीक समझने के लिए यह जानना अत्यन्त आवश्यक है, कि भिन्न २ आदमी उसके बारे मे क्या विचार रखते हैं। जैसे उन्होंने उसको देखा है, या उनके सम्पर्क में आने से तथा आँखों देखी घटनाओं से जैसा उन्होंने उसे पाया है, उससे उसके चरित्र का ठीक अनुभव लगाया जा सकता है। इस पुस्तक का लेखक देवबन्द, मुज़फ्फर नगर, मेरठ और देहली जाकर स्वयं बहुत से आदमियों से मिला है, और उनसे बाबू ज्योतिप्रसाद के बारे में पूछ ताछ की है। गुण भी पूछे हैं, और दोष या त्रुटियाँ भी। पत्र व्यवहार से भी उनके स्मरण प्राप्त किए हैं। स्वतंत्र रूप से इनसे उनके चरित्र का अनुमान लगाया जा सके, इसी उद्देश्य से बहुत से संस्मरण यहां दिए जाते हैं:—

१—सन २०,२१ में मैंने देहरादून से बाबू ज्योति प्रसाद को काँग्रेस आन्दोलन के बारे में एक पत्र लिखकर पूछा, परन्तु बाबू

ज्योतिप्रसाद ने एक ढीला सा उत्तर दिया। इस पर मैंने उन्हें एक पुरजोश पत्र लिखा। फिर बाबू ज्योतिप्रसाद ने मुझे देवबन्द आकर काम करने के लिए लिखा। परन्तु यहाँ आकर उनसे बातचीत करने पर देवबन्द की उन दिनों की परिस्थिति में बहुत धीरज तथा शांति से काम करने की उन्होंने सम्मति दी, क्योंकि बाबू ज्योतिप्रसाद की राय थी, कि नवयुवकों को बिना अपनी आर्थिक स्थिति ठीक हुए, आन्दोलनों में भाग नहीं लेना चाहिये, जिससे उन्हें बाद में अपने प्रण से न हटना पड़े और उस पर डटे रह सकें।

—पं० जगदीशचन्द्र वैद्य, देवबन्द।

२—उन्होंने हिन्दी पढ़ी। किंतु उर्दु अपने आप ही सीख ली और वे उर्दू बहुत जल्दी २ सुलेख लिखते थे और उनके पत्र भी उर्दू में ही थे।

—श्री० गंगा प्रसाद जी प्रेम, बी० ए०, एल० टी०,

३—उनकी वक्तृता में युक्तियां तर्क पूर्ण होती थीं और थोड़े में बात को समझा देते थे। और जनता पर उन की वक्तृता का अच्छा प्रभाव पड़ता था।

४—डाक का बड़ा इंतजार करते थे, और कई बार डाकघर तक जाकर डाक ले आते थे। पत्रों को शीघ्र पढ़कर उनका शीघ्र ही उत्तर देते थे, बिना इस बात का विचार किए कि पत्रोत्तर में खर्च होता है।

५—जैनप्रदीप का सम्पादन, प्रकाशन, पैकिंग, रैपिंग, टिकट लगाना, पता लिखना आदि सब काम स्वयं फुरती के साथ बड़े

अच्छे ढंग से मशीन के समान करते थे। कभी कोई क्लर्क नहीं रखा। (आरम्भ मे कुछ काम नोकर से लेते थे। जहा यह उनकी कार्य शक्ति प्रकट करता है, वहां यह पत्रकारों की सच्ची दुरवस्था तथा कठिनाई को भी प्रगट करता है। लेखक)

६—किसी विषय पर कविता, लेख और व्याख्यान आदि वे शीघ्र ही बिना किसी विशेष तय्यारी के करदते थे और उसको अच्छा ही करते थे।

७—समय के बड़े पाबन्द थे। जिस समय पर किसी से मिलने का समय लेते थे या देते थे, उसी समय पर काम करते थे।

८—मिलनसार थे। मुलाक़ात करने के बड़े शौक़ीन थे। चाहे वह आदमी सरकारी हो, काँग्रेसी हो या समाज सुधारक हो। जो उनके पास मिलने आता था, बाबू ज्योतिप्रसाद उससे मिलकर बहुत खुश होते थे और उसका उचित सम्मान तथा आदर करते थे।

९—लोगों के दुख दर्द मे शरीक होना उनके लिए स्वाभाविक सा हो गया था और सभी से बिना भेद भाव प्रेम करते थे।

१०—ईश्वर भक्ति, देव दर्शन, समाज-सेवा, सभासोसायटियों मे शामिल होना उनकानित्य नियम था

११—सहन शक्ति, धैर्य-शक्ति, कष्ट सहन-शीलता उनके विशेष गुण थे और आप कभी अपने आदर्श से विमुख नहीं हुए। कष्ट मे घबराते न थे। घर पर मृत्यु पर मृत्यु होने पर भी धैर्य को हाथ से न छोडा और कभी अपने काम को हाथ से न छोडा और कभी अपने काम में कमी न की।

१२- मृत्यु शय्या पर होते हुए भी, कभी उनका कराहते नहीं पाया गया। यह जानते हुए भी कि मृत्यु निकट है, कभी वेदना प्रगट न की, वरन प्रसन्न मुख रहते थे। ज्वर बहुत था, यह प्रगट नहीं होने दिया कि उनको मृत्यु की वेदना है। बल्कि राम-नाम जपते थे और इसको ईश्वरेच्छा समझते थे।

१३—बडे आशावादी थे। और धैर्य-शील स्वभाव के थे। तमाम बीमारी मे कभी यह ख्याल नहीं आया, कि वे न बचेंगे। केवल अंतिम दिन मृत्यु का ख्याल आया होगा।

—बाबू अमर नाथ वकील, देववन्द।

१४—पर सेवा के लिए हर समय तय्यार रहते थे, चाहे वह आदमी अपने मिलने वाला हो या नहीं। आगंतुक की सहायता करना कर्तव्य समझते थे।

१५—यदि किसी आदमी से उनका परिचय हो जाता था, तो फिर वे पत्र व्यवहार और मिलने आदि से उससे सम्बन्ध कायम रखते थे।

१६—लेन देन (dealings) के बड़े साफ़ थे और कोई आदमी उनका शाकी न था।

—बाबू जम्बूप्रसाद जैन वकील, देववन्द

१७—अपनी समाज की उन्नति का भाव उनके हृदय मे सर्वोपरि था और किसी प्रकार भी जैन समाज मे कमी न देखना चाहते थे। वे प्रथम जैन थे और सब कुछ पीछे थे। किन्तु अन्यों से भी प्रेम करते थे। उनके व्यवहार से कट्टरपन अथवा अनुदारता प्रकट न होती थी। यही कारण था कि अन्य समाजों मे उनके काफ़ी मित्र थे।

१८—अपनी बात की पच करते थे और उस पर डटे रहते थे' किन्तु यदि बाद मे उसमें उन्हे गलती मालूम होती थी, तो वे छोटे से छोटे आदमी से भी विरोध को हटाने मे आना कानी नहीं करते थे।

१९—स्वभाव मे कुछ क्रोध भी जरूर था। परन्तु उसके कारण किसी से कोई विशेष विरोध नहीं होता था। और जितनी जल्दी क्रोध आता था, उतनी जल्दी वह चला जाता था।

२०—भावुक थे। कवि और लेखक की भावुकता उनमे प्रयाप्त मात्रा मे थी। कल्पनाशील (Jmaginative) भी थे। समाज का तमाम चित्र जरासी देर मे कल्पना करके लिख देते थे।

२१—वे स्वनिर्मित (Secfmade) आदमी थे और छोटी स्थिति से उठकर इतनी ख्याति प्राप्त की।

—श्री० अनन्तप्रसाद जैन, देवबन्द,

२२—यदि आपके पास कोई दुखी या शोकातुर आदमी आ जाता, तो दस पाँच मिनट की बात चीत मे ही उसका रंज, शोक दूर हो जाता था। यही बात इगलैंड के प्रधान मंत्री वियमपिट में भी थी।

२३—आप अपने दुख रंज, घाटे की बात हर किसी को सुना कर दुखी न करते थे। शायद किसी विश्वस्त मित्र को ही सुनाते हों

२४—आप रौबदार आदमी थे। आपकी बात का प्रभाव दूसरों पर आसानी से पड जाता था।

२५—यदि कोई उनके पास गया, तो सदा उसकी सहायता

करने और कराने के लिए तय्यार रहते थे, चाहे उसके विचार उन से मिलते हों या नहीं।

—बाबू आनन्दप्रसाद, बी० ए०, प्रधान कांग्रेस कमेटी, देवबन्द।

२६—उन्होंने राष्ट्रीय कामों मे कभी क्रियात्मक (Active) भाग नहीं लिया। तो भी देवबन्द के राष्ट्रीय जीवन और राष्ट्रीय हलचलों मे उनका भाग कम न था।

२७—पंचायत आदि मे जब वे कोई फैसला देते, वह सब को मान्य होता था।

—ला० कीर्तिचन्द्र (सहपाठी) देवबन्द।

२८—आप में गुरु भक्ति कूट कूट कर भरी थी।

२६—यदि कोई आदमी आपके पास जाता था, तो आप सदा उसकी सहायता करने तथा कराने को तय्यार रहते थे, चाहे वह आदमी आप से मतभेद ही क्यों न रखता हो।

३०—एक बार रथोत्सव के मौके पर एक भाई ने प्रबन्ध के बारे में कुछ समालोचना करदी। मैंने ख्याल किया, कि यह फ़िक़रा (Remark) बाबू ज्योतिप्रसाद की सम्मति से किया गया है। मैंने बाबू ज्योतिप्रसाद को दस पाँच सख्त बातें कह दीं। इसी शाम को बाबू ज्योतिप्रसाद ने मज़दूरों को इनाम देने से पहिले मुझे बुलाने को कहा। परन्तु मैं न आया। अगले दिन वे स्वयं मेरे पास आए और सारी भूल-गलत फहमी-को दूर कर दिया।

३१—पिछले वर्ष १९३६ मे उत्सव के मौके पर दस्तूरुल अमल के कारण दो दल बन गए। परन्तु बाबू ज्योतिप्रसाद ने कहा कि

हम किसी दल में शामिल नहीं, उत्सव मे शामिल हैं। इसका फल यह हुआ, कि विरोधी दल भी उत्सव मे सम्मलित हो गया।

३२—भादों की दशलाक्षणी मे प्रतिदिन पूजन किया करते थे।

३३—अपने भाई जयप्रकाश की मृत्यु के पीछे उसकी स्मृतिमें बाबू ज्योतिप्रसाद ने ५००) रुपये छात्र वृत्ति (Scholarships) के लिए निकाले। उन्होंने समाज से इस फंड में कुछ सहायता देने की अपील की। मैंने १००) रुपये का वचन दिया। पर और कहीं से उनको एक भी बचन या रकम न मिली। इससे उन्हें बड़ा खेद हुआ और हृदय उदासीन (depressed) होगया। उनको ख्याल हुआ, कि अच्छा होता, कि वे अपना समय अपने काम मे लगाते। समाज सेवा से उनकी रुचि कम होगई।

—बाबू बलवीरचन्द एडवोकेट, रईस और आनरेरी—
मेजिस्ट्रेट, मुजफ्फर नगर।

३४—बाबू ज्योतिप्रसाद जी विवाद ग्रस्त विषयों पर प्राय. चुप रहा करते थे। और इससे शुद्ध आम्नाय वाले × इनको दोष देते कि इनके विचार बाबू पार्टी (सुधारक दल) के हैं। पर ये भी इन शुद्ध आम्नाय वालों को खुश करने का प्रयत्न करते थे।

नोट—और शायद इसीलिए कभी कभी सुधारक दल भी इन पर नरमी और दब्बूपन का दोष लगाया करता था। (लेखक)

३५—इन्होंने कभी रुपया बनाने का प्रयत्न नहीं किया। समाज सेवा का काम करते हुए उन्होंने कभी पैसा रुपया इकट्ठा करने की कोशिश नहीं की। यदि वे चाहते, तो बहुत रुपया बना लेते।

× कट्टर और स्थितिपालक जैनी। लेखक।

मेरे विचार में यह उनके चरित्र की अत्यन्त सुन्दर, उज्वल और अनुकरणीय बात थी। एक अच्छे कार्यकर्ता को उस समय तक कोई काम न करना चाहिये, जब तक कि वह अपने लिये कुछ रुपया एकत्रित न कर ले क्योंकि समाज उसके सार्वजनिक जीवन में और उससे अलग हो जाने पर उसकी कुछ भी चिन्ता तथा परवा नहीं करती।

३६—वे किसी एकान्त स्थान पर वास करने के इच्छुक थे। उन्होंने आगरे के समीप कैलाश पर एक स्थान पर रहना चाहा, पर वहा प्रबन्ध न हो सका। फिर वे कभी कभी पचकूला गुरु कुल में रहने लगे।

३७—वे तीनों सम्प्रदायों की सभा सोसाइटियों में बिना रोक-टोक शामिल होते थे और मजा यह था, कि कोई यह नहीं कह सकता था, कि वे दिगम्बरी हैं या श्वेताम्बरी या स्थानकवासी हैं। वे उनमें उनके ही समान रहते थे।

३८—बाबू ज्योतिप्रसाद जी समाज सेवा के छोटे से छोटे काम को बडी खुशी से करते थे। एक बार श्री ऋषभ ब्रह्मचर्य-आश्रम, हस्तिनापुर के दूसरे वार्षिक अधिवेशन पर पण्डाल में स्वयं झाडू दे रहे थे। मेरे यह कहने पर, कि नौकर को बुला लो, वे कहने लगे कि यह काम भी तो करना ही है और फिर नौकर भी तो काम कर ही रहा है।

—ला० उग्रसैन जैन सर्राफ़,
कोषाध्यक्ष, जिला कांग्रेस कमेटी, मुजफ्फरनगर।

३९—बाबू ज्योतिप्रसाद के संसर्ग ने मुझे बहुत सी ख़राबियों से रोके रखा।

४०—वे वैश्य होते हुए भी चारों वर्णों का काम करते थे।

४१—वे राज नैतिक काम करने के लिए दुर्बल थे।

४२—आप जैन समाज की भिन्न २ संस्थाओं के अधिवेशनों पर बराबर जाते थे। कर्त्तव्य का अहसास-ख्याल-बहुत था। और जैन समाज के लिए बहुत सहानुभूति रखते थे।

४३—उनको समाज सेवा का काम बहुत प्यारा था। जैन समाज की सेवा बहुत की और उसे ऊपर उठाने के लिए बहुत प्रयत्न किया।

४४—जैन बोर्डिङ्ग हाउस, मेरठ, के सम्बन्ध में बड़े उत्साही थे। और पहिला चन्दा उनका ही था। बोर्डिंग हाउस से उनका सम्बन्ध आरम्भ से अंत तक बना रहा।

—ला० मित्र सैन, सुप्रिटण्डण्ट जै० बो० हा० मेरठ।

४५—बीमारी के दिनों की चिट्ठियों मे ख़ास शाँति होती थी।

४६—देहली के जैनियो को जो लाभ उनसे था, वह किसी और से न था। फिर भी सिवाय जैन अनाथ आश्रम के और किसी भी संस्था ने (ख़ास कर जैन मित्र मडल ने) उनकी मृत्युपर शोक प्रस्ताव पास नहीं किया। इसका मुझे खेद है।

—ला० जौहरी मल सर्राफ़, देहली।

४७—जब कभी वे देहली आते थे, प्राय हमारे यहाँ ठहरते थे। और बहुधा चौबीसों घण्टों समाज, तथा कविता आदि के बारे में ही सोचते रहते थे।

—पं० महबूबसिंह जी रईस, सर्राफ़, देहली

४८—वे बडे प्रेमी और उच्च कोटि के समाज सेवक थे।

—लाला राजकृष्ण जैन, मैनेजिंग डायरेक्टर, दी कौलोनीजेशन लिमीटेड, देहली।

४९—पंजाब प्राँतिक सभा के हिसार वाले अधिवेशन मे उनका काफी हाथ था।

—ला० पन्ना लाल जैन अग्रवाल, देहली।

५०—मैंने जो कुछ लिखना सिखा है, वह सब उन की ही बदौलत सीखा है। इसलिए मै कह सकता हू, कि मुझे बनाने वाले वही थे।

—बाबू चन्दूलाल जैन अख्तर वकील, भूतपूर्व सहायक सम्पादक जैन प्रदीप, देहली।

५१—उन्होंने जैन प्रदीप का सम्पादन कई महीने के लिए मुझे सर्वथा सौंप दिया था और लग भग चार पाच महीने मैंने ही देहली से पत्र का सम्पादन किया था। आप प्रदीप की सम्पादकी सदा के लिए नवयुवकों को काम सिखाने के ख्याल से देने को तय्यार थे।

५२—आप बेतकुल्लफी बहुत पसन्द करते थे। और देहली मेरे पास प्राय ठहरते थे। खाना आदि जैसा बनता था, खालेते थे।

५३—स्व० सेठ ज्वाला प्रसाद जी ने दूरदर्शिता पूर्वक उनको बेफिकर करने के लिए तथा समाज के लिए अधिक उपयोगी बनाने के लिए, उनकी मासिक सहायता नियत करदी। स्वभाविक रूप से उनका परस्पर मे गहरा सम्बन्ध होगया। यह उन दोनों और

समाज के लिए अत्यन्त हितकर प्रमाणित हुआ । श्री जैनन्द्र, गुरुकुल, पंचकूला, को इस का प्रत्यक्ष लाभ हुआ ।

५४—श्री० भारतवर्षीय जीव दया प्रचारिणी सभा, आगरा, के देहली वाले वार्षिक अधिवेशन का सभापति सेठ ज्वाला प्रसाद जी को बनाने मे वेही निमित्त थे ।

५५—मूर्तिमान प्रेम थे । इसलिए प्रेमी नाम सार्थ किया ।

५६—मित्रों, साथियों और मिलने वालों के दैनिक कारबार, चिंताओं और कामों मे दिलचस्पी लेते थे, उनको अपना ही समझते थे और इस तरह व्यक्तिगत सम्बन्ध (personal affinity) क़ायम करलेते थे । समय पर बड़ा काम आते थ ।

५७—बाल सभाओं के अधिवेशनों पर बालकों के निमन्त्रण पर भी चले जाते थे और उनके कार्य कर्ताओं से सदा के लिए सम्बन्ध कर लेते थे ।

५८—सफ़र खर्च कभी न लेते थे । जैन प्रदीप की सहायता के रूप में यदि कुछ विना मागे मिल जाता, तो लेलेते थ, और यह बुरा न था ।

५९—उस समय जो भी आन्दोलन चलते थे, वे उन मे से किसी मे भी पीछे रहे मालूल नहीं होते । जहाँ तक मुझे ख्याल है, प्रकट या अप्रकट रूप से उन्होंने उन मे भाग जरूर लिया है ।

—पं० जुगलकिशोर मुख्तार, सरसावा ।

६०—जैन समाज की संस्थाओं से आप को बड़ा प्रेम था । आपने जैन समाज से बुरे रिवाजों को दूर करने की बहुत कोशिश की । आप शीलवान और धर्म के सच्चे प्रेमी थे ।

—ला० मन्नू लाल बैंकर, मेरठ ।

६१—जैनेन्द्र गुरुकुल पचकूला का प्रथम वार्षिक अधिवेशन २१ फरवरी सन् १६२६ को पंच कूला में हुआ। इसी मौके पर दोनों साहब यानी बाबू ज्योतिप्रसाद जी और सेठ ज्वाला प्रसाद जी की मुलाकात हुई। सेठ ज्वाला प्रसाद जी का १७ जनवरी १९३८ को मुकाम देहली मे मृत्यु हुई। इस समय बाबू ज्योति प्रसाद भी वहां पर थे।

—भगत नोराताराम, अधिष्ठाता जैनेन्द्र गुरुकुल, पंचकूला।

६२—गुरुकुल के पहिले अधिवेशन के बाद से और मरने समय तक सेठ ज्वाला प्रसाद जी और बाबू ज्योति प्रसाद जी का बड़ा सम्बन्ध रहा। बल्कि यूं कहिए, कि बाबू ज्योति प्रसाद जी सेठ साहब के दाये हाथ थे। सेठ जी घरेलु और सामाजिक कार्यों मे बिना उन की सम्मति के कोई काम न करते थे। एक प्रकार से दोनों मे घरोपा सा हो गया था। सेठ ज्वाला प्रसाद जी की सामाजिक और लौकिक प्रसिद्धि मे बाबू ज्योति प्रसाद जी का बड़ा हाथ था। और बाबू ज्योति प्रसाद जी की भी प्रसिद्धि खास कर स्थानकवासी समाज में सेठ जी की बदौलत होगई।

६३—बाबू ज्योति प्रसाद जी अपने विचार के पक्के थे। आपका ख्याल था कि पत्नी के मर जाने पर पति को दूसरी कुवारी लड़की से विवाह करना पाप है। चुनाँचे जब आप को धर्म पत्नी स्वर्गवास कर गई, तब आपने दूसरे विवाह का नाम भी नहीं लिया। और लोगों को यही उत्तर दिया "मैं अपनी कलम से लिख चुका हूँ। तो जीवन पर तक इसी पर अमल करूंगा।"

६४—इनसानी कमजोरियों से वे रहित न थे विधवा विवाह

के हामी थे। लेकिन फिर भी मौका पड़ने पर इसे अमली. जामा न पहिना सके।

६५—स्वर्गीय बाबू ज्योति प्रसाद जी मेरे परम स्नेही मित्रों मे से थे। वे बड़े सादगी पसन्द, सरल स्वभावी, मिलनसार थे। उनमे कपट भाव लेश मात्र को भी नहीं था। वे जो कुछ कहते थे, करते भी वही थे। उन्छृंखलता उनमे नहीं थी। वे किसी नवीन विचार को एक दम स्वीकार नहीं करते थे, जब तक कि उस पर गम्भीर विचार न करलेते थे।

—बाबू विश्वम्भर दास गार्गीय, झांसी।

६६—विधवा विवाह के वे अंतरग मे समर्थक थे, किन्तु इसके पक्ष मे उन्होंने आज तक कोई लेख नहीं लिखा। इस विषय के लेखों को उन्होंने अपने पत्र मे स्थान दिया है, किन्तु अपने को उन लेखों की जिम्मेवारी से अलग रखा है। आप सच्चरित्र भी पूरे थे।

६७—करीब १६११,१२ की बात है, जब मोरेना की छात्र-मण्डली देवबन्द की भूतत्रयी मे बाबू सूरजभान, और पं० जुगल किशोर जी के साथ आपको भी सम्बोधन किया करती थी।······ किन्तु उनके जैसी प्रखरताऔर तेजस्विता आप मे न थी। इसलिए जहाँ उक्त दोनों महानुभावों की तीक्ष्ण आलोचनाओं के परिणाम स्वरूप उनके तिरस्कार की लहर बह रही थी, आप कभी उस तिरस्कार के पात्र न हुए।

६८—आपकी लेखनी में एक विशेषता थी, कि आप कड़वी से कड़वी बात को भी मीठे स्वर में लिखने में बड़े चतुर थे।

६९—आपको मैंने कभी क्रोध के आवेश मे नहीं देखा। सम्भव है, यही कारण हो कि आपके लेख भड़काने व क्रोध दिलाने वाले नहीं होते थे।···कभी कभी तो आप विनोद की बातें करके आवेश को यूं ही टाल दिया करते थे। अशांत वातावरण को शॉत कर दिया करते थे। इस तरह आप अल्हाद की भी पूर्ण सामग्री थे।

७०—मैं ज्योति प्रसाद को बहुत समीप मित्र के रूप मे जानता था। वे एक महान आत्मा थे।

—बाबू अजित प्रसाद एम० ए०, एल० एल० बी०, एडवोकेट
सं० अंग्रेजी जैन गजट, लखनऊ।

७१—कौम के लिए ऐसे वीर मिलने अत्यन्त कठिन हैं। आपने कौम के लिए न केवल तन मन और धन से ही कुरबानियॉ की, बल्कि जाति की हर आवाज और मिशन को अपने पत्र जैन प्रदीप के द्वारा दुनिया के कोने २ तक पहुॅचाया।

—श्री० ज्ञानचन्द ओसवाल, स्याल कोट।

७२—बाबू ज्योतप्रसाद जी जैन कवि बीसवीं सदी के उन जैन सुधारकों में से थे, जिनका हृदय सरोवर सामाजिक-सुधार भावनाओं से केवल ओतप्रोत न था, वरन जिन्होंने जैन समाज के सुधार और अभ्युत्थान के लिए आजन्म प्रशंसनीय और अनुकरनीय सेवायें की हैं।

—राय साहब लाला नेमदास जी, शिमला।

७३—आप बड़े सहृदय, प्रेमी और उदार चित सज्जन थे। साम्प्रदायिकता के आप कट्टर विरोधी थे। दिगम्बर, श्वेताम्बर

और स्थानकवासी किसी भी सम्प्रदाय की धार्मिक संस्था क्यों न हो, आप वीर प्रभू के शुभ नाम पर उसकी सेवा हृदय से करते थे। आपके वियोग से जैन समाज की असह्य क्षति हुई है, उसकी पूर्ति होना दुःसाध्य है।

७४—आप नवयुवकों, विशेषकर विद्यार्थियों, के बड़े हित चिंतक थे और उनकी कठिनाइयों को सुलझाकर उनको सदा के लिये मोह लिया करते थे।

—श्रीयुत श्रीराम गुप्ता, देवबन्द।

७५—बाबूज्योतिप्रसाद की अन्तिम बीमारी के दिन थे। मैंने उनसे कहीं एक पत्र लिखाया था। बीमारी के दिनों मे भी उन्होंने उस को अपनी डाक वही मे चढ़ा कर और नम्बर डाल कर डाक मे डलवाया था।

—श्री० नन्दकिशोर तिवारी एम० ए०, एल० टी० हैडमास्टर
हरपतराय हाई स्कूल, देवबन्द।

७६—असहयोग आन्दोलन के दिन थे। मैंने उन्हें एक साधारण पत्र लिखा। भूल से मैं अपना नाम लिखना भूल गया। चार पांच दिन पीछे उनका एक पत्र मेरे पास आया और मुझे उन्होंने पत्र पर नाम लिखने की सख्त ताकीद की। मैं अपने पुराने घनिष्ट सम्बन्ध को देखते हुए और पत्र के राजनैतिक न होने के कारण उन से कुछ खिच गया। मालूम होता है कि वे छोटी छोटी बातों मे भी बहुत चौकस, सावधान रहते थे।

स्व० ला० रतन लाल जैन, सोनीपत

७७—एक बार मैं बाबू ज्योतिप्रसाद और कुछ मित्र देहली मे फ़तहपुरी बाज़ार से गुज़र रहे थे। वहां हर समय बहुत से समाचार पत्र विक्रेता खड़े रहते हैं। पत्र बेचने वाले आपस मे कुछ बातें कर रहे थे, परन्तु हम मे से शायद बाबू ज्योतिप्रसाद के सिवाय और किसी ने उनकी बात न सुनी। आपने झट दो पैसे देकर हिंदी दैनिक खरीद लिया। आगे चलकर आपने हम सब को हिंदी समाचार पत्र खरीदते रहने का आग्रह किया और कहा कि वे पत्र विक्रेता हिंदी पत्रों की विक्री की कमी के कारण भविष्य मे हिंदी पत्र न मंगवाने की बात चीत कर रहे थे।

७८—ज्योतिप्रसाद जी ने अपने लेखों, उपदेशों और कविताओं द्वारा समाज का बहुत बड़ा उपकार किया है। आप एक सच्चे और सर गर्म कार्य कर्ता थे। आपकी आयु का बड़ा भाग समाज सेवा मे ही गुज़रा।

ला० नाहरसिंह रईस, स० जैन प्रचारक, सरसावा।

७९—स्वर्गीय बाबू ज्योतिप्रसाद में बहुत खूबियां थी।...... जैनेन्द्र गुरुकुल को आपसे बहुत सहारा था।

रा० सा० श्री० रामलाल कीमती, हैद्राबाद [दक्कन]

८०—आप मुझसे सदा कौली भर कर मिलते थे।

पण्डित कैलाशचन्द्र शास्त्री, बनारस।

१५

उनके कुछ पत्र

साधारण रूप से दैनिक काम-काज के सम्बन्ध में जो पत्र लिखे जाते है, वे पत्र लिखने और पाने वाले के सम्बन्ध तथा जीवन पर तो प्रकाश डालते ही हैं, पर वे समाज और देश की बहुत सी सामयिक बातों तथा प्रश्नों पर भी बहुत प्रकाश डालते हैं। पत्र बडे प्राकृतिक और सच्चे होते हैं, क्योंकि ये छपने के भाव से नहीं लिखे जाते। इस लिये इतिहास और विशेष कर जीवन चरित्रों के लिखने मे इनसे बडी सहायता मिलती है और यही इनका महत्व है। पश्चिमी देशों में बड़े आदमियों के पुराने पत्र बडे उपयोगी, मूल्यवान और महत्वपूर्ण समझ कर इकट्ठे किए जाते हैं और पुस्तकाकार में छापे जाते हैं। हमारे देश में और विशेष कर जैन समाज मे साहित्य के इस अंग की सर्वथा उपेक्षा हो रही है।

बाबू ज्योति प्रसाद जी बड़े पत्र लिखते थे। पर शोक है कि मुझे उनके कुछ भी पत्र प्राप्त न हुए। शायद किसी ने उन्हे अपने पास रक्खा भी न हो, पढ़ कर फाड दिया हो। मेरे पास सन

१९२० से अन्तिम समय तक उनके बहुत से पत्र आये थे। पहिले मुझे अपने पत्रों को इकट्ठा करने का बहुत शौक था। सोनीपत मे मुझे उनके बहुत से पत्र मिल गए। उनमें से कुछ उपयोगी पत्रों की नकल यहाँ दी जाती है। आशा है कि इनके अध्ययन से पाठकों को बाबू ज्योति प्रसाद के कुछ विचार मालूम होंगे और समाज की दशा पर प्रकाश पड़ेगा।

उनके सब पत्र उर्दू मे हैं, इसलिये यहाँ उनको हिन्दी लिपि मे दिया जाता है। कहीं २ किसी शब्द का अनुवाद कर दिया है।

नम्बर ८३८१ प्रेमभवन, देवबन्द।

१

ॐ १८-६-२१

प्रियवर,

जय सर्वज्ञ देव की! पत्र मिला..............

बड़े गांव की बाबत जरा विस्तार से लिखियेगा और निम्नलिखित बातों पर प्रकाश डालियेगा.—

(१) साधु अनन्तकीर्ति कैसा आदमी है? कोई नीतिज्ञ है या ऊंगा?

(२) पानी जिसकी चारों तरफ दुहाई मची हुई है, क्या विशेषता रखता है?

(३) केशलोंच जिसकी धूम मचाई गई थी, वह नुमाइश कैसी रही?

(३) इस कद्र लोगो ने आकर क्या लाभ उठाया?

(५) जो मूर्ति निकली है, उसमे कोई खास बात है क्या?

(६) आपने खास तौर से क्या आनन्द उठाया ?

उत्तर शीघ्र दो। योग्य सेवा।

सेवक
ज्योति प्रसाद

२

जैन समाज मे नाटकों का रिवाज बढ़ रहा था। छोटे-छोटे बच्चों को जनाने हाव-भाव और नाचना सिखाया जा रहा था। इनका प्रबन्ध प्राय: अच्छे चरित्र के आदमियो के हाथों मे न होता था। देख भाल पूरी न थी। सोनीपत जैन समाज भी नाटक खेलने मे किसी से पीछे न थी। मुझ जैसे कुछ नवयुवकों ने नाटक बन्द करने का आन्दोलन उठाया था जिससे हमे पचायती दमन का सामना करना पड़ा था। बाबू ज्योति प्रसाद जी ने उस समय जैन प्रदीप के द्वारा हमारी काफी सहायता की थी। उसी सम्बन्ध में आपका यह पत्र देखिये :—

नं० ८५३९ प्रेम-भवन, देवबन्द।

ॐ २३-७-२१

प्रियवर,

जय सर्वज्ञ देव की ! पत्र मिला। धन्यवाद।

वैशनव समाज में नाटक होना कोई आश्चर्य की बात नहीं है। वहा राम लीला, कृष्ण लीला और रास लीला अर्से से होती आ रही हैं। जैन समाज ने यह सबक उन्हीं लोगो से सीखा है। वहां विरोध ज्यादा काम नहीं कर सकेगा। जैनियों मे नया

रिवाज है, यहाँ विरोध काम करसकेगा। मैं आना तो चाहता हूँ, लेकिन विदू कारण से तबीयत नहीं चाहती।

योग्य सेवा !

सेवक

ज्योति प्रसाद

३

ॐ

न० ९०५६

प्रेम भवन, देवबन्द।

२१-११-२१

प्रियवर,

जय सर्वज्ञदेव की। पत्र मिला। मैंने जब से सोनीपत छोड़ा है तब से बीमारी के चुंगल में फंसा रहा। पहिले स्वयं बीमार रहा, फिर छोटे भाई दर्द गुर्दा में फंसे रहे, उसके बाद माता जी और भाई की लड़की। मैं केवल दो रोज़ के लिए हस्तिनापुर गया था। जो कुछ वहां हुआ वह बयान से बाहर है। दुराचार को अत्या चार से दवाया गया है। जैन प्रदीप कालेज के ही पते से रवाना कर दिया जायगा। आगे जैन प्रदीप मासिक निकलेगा या क्या या उसका वजूद (अस्तित्व) रहेगा या नहीं, यह दो चार रोज़ में तय होजायगा। योग्यसेवा

सेवक

ज्योतिप्रसाद जैन

४

ॐ

नम्बर ९५८३ प्रेम भवन देवबन्द

२१-३-२२

प्रियवर, बाबू माईदयाल जी,

जय सर्वज्ञ देव की। कृपा पत्र मिला। 'मीरा बाई' नाम का लेख भी मिल गया। × × × प्रदीप आपके पास बराबर पहुचता रहेगा। मुझे जलसे में शामिल न होने का अत्यन्त खेद है। × × मैं शायद कल शाम को ७बजे की ट्रेन से आऊं। और एक दिन ठैर करके वापिस हो जाऊं। यथासंम्भव मिलने की कोशिश करूं गा। दिल चाहता है, कि एक व्याख्यान कालेज के जैन नौजवानों के रोबरू जरूर करूं। लेकिन देखिए कब वक्त मिलता है। आप जो लेख दिल चाहे लिखिये। जरूर जगह मिलेगी। अब तो जैन प्रदीप पन्द्रहवें रोज का कर दिया गया है। जलसे के हालात जो आपने लिखे, वह मालूम किए। वहतर है। कुछ तो काम हुआ। योग्य सेवा।

ज्योतिप्रसाद जैन

(५)

जैन समाज मे दस्सा भाइयों को पूजन अधिकार दिलवाने का प्रश्न पुराना प्रश्न है। खातौली का वह मुकदमा, जिसमें स्याद्वाद वारिधि स्वर्गीय पं० गोपालदास जी वरैया ने जैन शास्त्रों से दस्सों के पूजन अधिकार को प्रमाणित किया था, जैन समाज के इतिहास में एक अमर घटना रहेगी। इसी समय प्रसिद्ध समालो-

चक प० जुगल किशोर जी मुखतार सरसावा ने अपनी खोजपूर्ण पुस्तिका "जिनपूजाधिकार मीमांसा" लिखी थी। विद्वान और उदारचित जैनी दस्सा भाइयों को देव पूजन अधिकार देने को तय्यार थे, परन्तु पुराने विचार के आदमी और मन्दिरों के प्रबंधक इसका विरोध कर रहे थे। सोनीपत जैन समाज में भी यह प्रश्न उठा और वहाँ खूब आन्दोलन हुआ। उसकी कुछ झलक आपको पत्र नम्बर ११८०३, ११९१९ तथा १२०२५ से मिलेगी। बाबू ज्योतिप्रसाद जी ने इस आन्दोलन में सोनीपत के दस्सों और उनके साथियों की काफ़ी सहायता की थी, जब कि दिगम्बर जैन महासभा के सन् १९२३ के देहली वाले अधिवेशन के समय दस्सा भाइयों को पूजन अधिकार दिलाने वाला मेरा प्रस्ताव विषय निर्धारिणी समिति (Subjects committee) में ठुकरादिया गया था। अब प्रायः हर स्थान पर दस्सों भाई जिन पूजन कर सकते हैं। पर सोनीपत में इन्हें वह अधिकार तब मिला, जब कि वहाँ देहली स्थानक वासी जैन समाज ने स्थानक स्थापित कर दिया और उनको स्थानकवासी बना लिया।

६

ॐ

न० ११८०३ प्रेम भवन, देवबन्द।

२-६-२३

धर्म बन्धु बाबू माईदयाल साहब,

जय सर्वज्ञदेव की। पत्र का जवाब कुछ देरी से दे रहा हूं। क्षमा करें। 'चाणक्य नीति' अच्छी पुस्तक है। मेरी राय में उसका

हू वह अनुवाद करना तो फ़जूल है। हाँ, बाज़ बाज़ श्लोक का भाव लेकर स्वतंत्र लेख लिख जाइये। लेख संक्षिप्त हो, लेकिन हों गूढ़ रहस्य से भरे हुए। आयंदा जैसी राय हो। मैं इसी विचार में हूँ कि एक बार देहली होते हुए सोनीपत आऊँ और आप लोगों से मिलूँ। आज देहली की खबर है कि वहां के एक जैन मन्दिर में दस्सों ने पूजन किया है। आप के यहां क्या हो रहा है। लाला सुदर्शन लाल (मेरठ) की आमद ने क्या सहारा लगाया ? ऊंट किस करवट बैठने वाला है ? क्या दस्सा भाई बहुत जल्द स्थानकवासी होने वाले हैं, जैसा कि स्थानकपंथी समाचार पत्रों से मालूम हो रहा है ? परसों जो जैन प्रदीप जारी हुआ है, उसमे लाला श्यामसुन्दर लाल मेरठ की रिपोर्ट निकाली है। मैंने एक नोट भी दिया है। और लेख भी निकल रहे हैं। क्या इनका कुछ प्रभाव हो रहा है ? या यूं ही, एक कान सुनकर दूसरे कान निकाली जा रही हैं ? लेख लिखियेगा, लेकिन संक्षिप्त, बहुत लम्बे चौड़े नहीं।

सेवक

ज्योतिप्रसाद

६

ॐ

न० ११६१६ प्रेम भवन, देव वन्द।

२६-६-२३

प्रियवर बाबू माईदयाल साहब,

जय सर्वज्ञ देव की। कृपा पत्र मिला। आप फर्स्ट डिवीजन

(प्रथम श्रेणी) में पास हुए यह खुशी की बात है। मालूम नहीं करनाल के कैलाशचन्द्र, पानीपत के जैनदास, हांसी के उत्तमचन्द का नतीजा क्या रहा? अगर कुछ मालूम हो तो लिख देवें। जिस सभा (दस्सा स्वत्व रक्षिणी सभा, सोनीपत) के सगठन का आप विचार करते हैं, वह विचार शुभ है। मेम्बर बनाइयेगा जब संगठन दृढ़ होजायगा, तब सब ही काम बनजायेंगे। अभी तो जरूरत संगठन की है। विचार निहायत अच्छा है। मुबारक हो।

अगर क़ौम के अच्छे दिन आने वाले हैं, तो आपको जरूर कामयावी होगी। मैं हर तरह से सेवा के लिए तय्यार हूं।.........
नए समाचार लिखें।

सेवक
ज्योतिप्रसाद

७

ॐ

न० १२०२५ प्रम भवन, देवबन्द
२४-१-२३

प्रियवर,

जय सर्वज्ञ देव की। (दस्सा स्वत्व रक्षिणी सभा का) विज्ञापन मिला। छपने भेज दिया है। अगर जरूरत हो, तो आनरेरी मेम्बर मुझे भी बना लेना। वरंना खैर। – – – ×

सेवक
ज्योतिप्रसाद

---

(१) इससे नवयुवकों की पढ़ाई परीक्षा आदि में उनकी दिलचस्पी प्रकट होती है लेखक।

८

ॐ

न० १८५१० देवबन्द

२६-१०-२३

प्रियवर बाबू माईदयाल,

जय सर्वज्ञ देव की। पत्र मिला। ....

संगठन का इन्तजाम कौन करे? अब तो इसका दारमदार नौजवानों पर ही है। लेख जल्द भेजियेगा। देहली अभी तो नहीं आऊंगा। हां, जब आऊंगा, तब मिलूंगा जरूर।

सेवक

ज्योति प्रसाद जैन

९

ॐ

न० १५४५६ प्रेम भवन, देवबन्द

२६-३-२५

प्रियवर,

जय सर्वज्ञ देव की। × × × आपका किताब (जैन समाज दर्शन) लिखने का विचार निहायत उमदा (श्रेष्ठ) है। जरूर लिखियेगा। जो सेवा मैं कर सकूंगा, जरूर करूंगा। बाद इम्तिहान (परीक्षा) आप देवबन्द तशरीफ लावें और तमाम पुराने समाचार पत्रों को देखें। फायल बा जाब्ता तो नहीं है, लेकिन वैसे मौजूद बहुत पर्चे हैं। आपका इरादा इम्तिहान के बाद काम करने का है, इसके लिये बधाई। अब तो आप लोगों ही पर काम की

टेक है। हमने तो जो हमारा काम था, पूरा तो नहीं, लेकिन किसी कद्र कर दिया।

ज्योति प्रसाद जैन

१०

लेख न मिलने पर उल्हाना देखिये।

ॐ

नं० १७८२ प्रेम भवन, देवबन्द।

२८-१-२६

प्रियवर,

जय सर्वज्ञ देव की। जैन प्रदीप को तो बिलकुल ही भुला दिया। क्या कलमी सहायता न देने की क़सम ही खा बैठे हो। अब तो उम्मीद यह थी, कि जैन प्रदीप में एक और बी० ए० साहब का नाम चमकता हुआ नजर आगया, लेकिन आप हो बैठे खामोश। न जाने क्यों?

अब जैन प्रदीप माहवारी हो गया है। पृष्ट हो गये पूरे ५२। लेख जियादा चाहियेगा। और जरा कलम को सम्भालियेगा। यूं काम नहीं चलेगा। जवाब इनायत हो।

ज्योतिप्रसाद

११

प्रेस की कठिनाई का हाल देखिये।

ॐ

नं० १७१३१ प्रेम भवन, देवबन्द।

७-२-२६

प्रियवर,

जय सर्वज्ञ देव की। लेख मिला। धन्यवाद। प्रदीप मे छपेगा। लेख का सिलसिला शुरू कर दीजिये। जियादा जरूरत है। जनवरी का परचा आजकल में जारी होने वाला है। दूसरे प्रेस का इन्तजाम किया है। आगे सुभीता हो जायगा। अभी फ़रवरी का परचा भी देरी से निकलेगा। क्या किया जाय? पराये बस की बात है।

ज्योतिप्रसाद जैन

१२

जाति प्रबोधक का सम्पादक बनने पर मुझे प्रोत्साहन।

ॐ

नं० १९६४६ प्रेम भवन, देवबन्द।

२३-४-२७

प्रियवर बाबू माईदयालसाहब,

जय सर्वज्ञ देव की। कृपा पत्र मिला। जो कुछ आपको (अस्वस्थाता के बारे में) मालूम हुआ है ठीक है। तबीयत अभी तक साफ़ नहीं हुई। इसी वजह से (जैन मित्र मन्डल के वीर जयन्ती उत्सव) जलसे पर देहली नहीं आ सका, यद्यपि बहुत कुछ उमंग

थी। जाति प्रबोधक का नम्बर कल मुझे मिला है। आपके साहस को आफ़री। मैं यथासम्भव जरूर सेवा करूंगा। मेरे यहां १७ मई को भानजी की शादी है। उसके बाद फ़ुरसत होने पर जरूर लेख दूंगा। भावना है, कि इस महान कार्य में सफलता प्राप्त हो। योग्य सेवा।

ज्योतिप्रसाद

१३

आप मित्रों के दुख दर्द में किस तरह तय्यार रहते थे, यह गुप्त ढंग देखिये।

ॐ

न० २००२३　　　　प्रेम भवन देवबन्द

६-८-२७

प्रियवर,

जय सर्वज्ञदेव की। भाई को क्या तकलीफ है? अगर कुछ सहायता की जरूरत हो, तो मैं...तय्यार हूं। जितनी मेरी शक्ति है। यह वाक्य प्राइवेट है। लेख जरूर भेजियेगा। आज जुलाई का परचा देरी से जारी हुआ है। इसको मिस्टर चन्दूलाल ने एडिट किया है। मज़मून मेरे पास रवाना कर दें या नजफ़गढ़ मिस्टर चन्दू लाल अख़तर को ......। भाई के बारे मे खुलासा तहरीर फरमावें　...

ज्योतिप्रसाद जैन।

१४

ॐ

नं० २१५८ प्रेम भवन, देववन्द ।

प्रियवर, २३-१-२८

जय सर्वज्ञ देव की । कृपा पत्र मिला । आपका लेख फ़रवरी के नम्बर में तमाम निकाल दिया जायगा । विधवा विवाह का लेख जैन प्रदीप में प्रकाशित न करूंगा । इसके लिये अभी मुआफी चाहता हूं । मेरी राय में तो आप भी इस मजमून (विषय) पर क़लम उठाने के अधिकारी नहीं हैं ।
गौर कर लीजिएगा । ज्यादा क्या अर्ज करूँ । योग्य सेवा ।

ज्योतिप्रसाद जैन

१५

आप मुझे निराश होते हुये देखकर हिम्मत बढ़ाते रहते थे । आपके इस पत्र को पढ़िये । यह समय मेरे जीवन में अत्यन्त निराशा का समय था । सामाजिक कामों से मैं अलग हो चुका था ।

नं० २२४१८ प्रेम भवन, देववन्द ।

श्रीमान भाई साहब, २१-७-२८

जय जिनेन्द्र देव की । कृपा पत्र मिला । हालात मालूम हुए । ... ... निराश होना सही है । लेकिन भाई हिम्मत भी कोई चीज है । जो कुछ बन पड़े वह किए जाइए । आखिर हद हर एक बात की होती है । आपको ट्रेनिङ्ग कालेज जरूर जाना चाहिये । स्कूल लाइन में इसकी बड़ी सख्त जरूरत है । ......

ज्योतिप्रसाद जैन

१६

जाति प्रबोधक के मान हानि के मुकदमे के वास्ते खर्च की मुझे जरूरत थी। प्रकाशक श्रीयुत फूलचन्द लेखकों के नाम कोर्ट को बताकर बिल्कुल अलग हो गया। उसकी ज़बानी सहानुभूति से क्या काम चल सकता था उस समय बाबू ज्योतिप्रसाद ने जो सम्मति दी, वह फलदायक हुई। आपकी सम्मति यह थी·—

नं० २३१५५ ॐ प्रेमभवन, देवबन्द।

प्रियवर, १-१२-२८

जय जिनेन्द्र देवकी। कृपा पत्र मिला। लेख के बारे में ख्याल नहीं पड़ता, कि वह कौन सा था। परचे इधर उधर रक्खे हुए हैं। दीवाली के बाद जब से सफ़ैदी हुई है, तब से कागज़ात ठीक करके रखने का मौक़ा नहीं मिला। क्या आप उस लेख की नकल मुझे रवाना फ़रमा सकते हैं? या वह कौन सा लेख था? (मुक़द्मे के) खर्च के लिए रुपये की ज़रूरत पड़ेगी और आपने लाला जौहरीमल को लिखा है, बहत्तर है। आप प्रेमी जी (पं० नाथूराम प्रेमी, बम्बई) को जरूर लिखियेगा। ऐसे मुआमलात में क़र्ज लेकर खर्च करना मुनासिब नहीं है। जातिप्रबोधक की सहायता में मे ही खर्च होना चाहिये। ब्रह्मचारी जी (ब्र० शीतल प्रसाद जी) को भी लिखियेगा। ताकि वे सहायता करायें। बाकी खैरियत। मेरी तबीयत कल से बहुत खराब है। योग्य सेवा।

ज्योतिप्रसाद जैन

ऊपर के सब पत्रों को पढने से पाठकों को समाज की स्थिति सामयिक अवस्था और बाबू ज्योति प्रसाद के चरित्र के बारे में कुछ ज्ञान होजायगा।

१६

ज्योति वाक्यामृत

बाबू ज्योतिप्रसाद के समाचारपत्रों की फायलों तथा पुस्तकों को पढते समय कुछ ऐसे वाक्यो को मैंने लिख लिया था, जो कि स्थायी रूप मे उपदेश के लिए काम मे लाये जा सकते हैं। इन पर विचार, मनन और व्यवहार करने से आदमी का चरित्र अवश्य ऊंचा उठ सकता है और उसे सुख तथा शाँति प्राप्त हो सकती है.—

१—सुख इच्छा के नाश हो जाने का नाम है। जबतक इच्छा लगी हुई है, तब तक हरगिज़ सुख नहीं हो सकता। जिस आदमी की जिस क़द्र इच्छा कम होगई है, वह उसी क़द्र सुखी होगा। इस लिए दुनियादार (संसारी आदमी) को, जो सुख शाति का जिज्ञासु है, लाजिम है कि अपनी इच्छाओं को दूर करके सब्र—संतोष—करे। बस यह सुख शाति की कुञ्जी है।

२—कर्तव्य पालन करो, उद्देश्य स्वयमेव पूरा हो जायगा।

३—दुनिया का हर एक काम हरएक प्रकार के ऊचे तथा छोटे लोगों के शामिल होने से चलता है। जब तक सब तरह के आदमी परस्पर सहायता न करें, तब तक अकेला आदमी कोई काम पूरा नहीं कर सकता। छोटे से लगाकर बड़े काम तक निगाह दौड़ाइएगा, कि वह भी बिना दूसरो की सहायता के नहीं हो सकता।

४—मा बाप का कर्तव्य है, कि अपनी प्यारी सन्तान को ब्रह्म-

चर्य आश्रम मे ब्रह्मचारी रखकर शिक्षा दिलावे और उनको काबिल सतान बनावे, ताकि आगे नसल चलती रहे। वरना याद रहे, कि इस कमज़ोरी का यह नतीजा निकलेगा, कि आगे सतान पैदा होनी बंद हो जायगी और दुनिया से नाम निशान मिट जायगा ।

५— सतसंगत तलाश करो। सत सग अख्तियार करो। स्वय सत सगी वनो। अन्य यार दोस्तों को सत संगी वनाओ। संसार मे एक सत सग ही आत्मा का कल्याण कर सकता है।

६—जिस हृदय मे दूसरे के दर्द का दर्द न हो जाय, वह हृदय नहीं है, बल्कि मॉस का लोथडा है। हृदय उसको ही कहा जायगा, जिस हृदय मे दूसरे के दर्द का दर्द इस कद्र उठ जाय कि हृदय को बेचैन कर दे।

७—जिस कद्र रुपया आप मन्दिरों की चहार दीवारी रंगने मे खर्च कर रहे है, या सोने चांदी के रथ, हाथी, घोड़े बनाने में लगा रहे हैं, अगर इस कद्र रुपया ज्ञान के प्रचार मे लगाओ, तो निस्सन्देह दुनिया भर का कल्याण हो जाय और श्री महावीर स्वामी का उपदेश हरा-भरा हो जाय।

८—धन्य है वह आदमी जिसका जीवन उन्नति के ख्याल मे गुज़रे।

९—सदा फले फूलेगा वह आदमी, जो कि दूसरों को फलता फूलता देखकर खुश होता है ।

१०—कर्तव्य को पूरा न करने से हृदय चोर की तरह कॉपता रहता है। इसलिए अपना कर्तव्य पालन करो।

११—आदमी होना और बात है, और बनना और बात है।

आदमी बनने के लिए एक मन्त्र काफ़ी है, और वह केवल इन्सानी फ़र्ज मानव-कर्तव्य को पूरा करना है।

१२--दुर्बल मनुष्य ही मृत्यु से डरते हैं। जिनकी आत्मा बलवान है, जो आत्मा को अजर अमर मानते हैं, जो वस्तु के असली स्वभाव को जानते है, वे मृत्यु से कभी नहीं डरते, वे मृत्यु को खुशी के साथ गले लगाने को तय्यार रहते हैं। उनको मृत्यु की गोद माता की गोद से कम मालूम नहीं होती।

१३—लूट की माया से परहेज करो। इस स्याही के धब्बे से अपने आपको बचाओ। सच्चे साधन से, ईमानदारी से और सच्चाई से माया को पकडो।

१४—जिस आदमी के सीने मे हृदय होगा, वह नेकी का बदला नेकी से देगा।

१५—हमारे कामों के अन्दर अगर कोई गलती या कमी रह गई होगी, तो उसको सिवाय नुकता चीनी करने वालों—समालोचकों—के और कौन बतलायगा। इस लिए वे प्रशंसा के योग्य हैं, और उपकारी हैं।

१६—आत्मा अजर अमर अविनाशी है। शरीर नाश होने वाला है। तमाम धन दौलत आदि सामान भी नाश होने वाले है। इन का प्राप्त होना न होना एक ही बराबर है। पुण्य के प्रभाव से ये सब सामान मिल जाते है, और पाप के उदय से नष्ट हो जाते हैं। फिर दुख किसका माना जाय? जिसका संयोग है, उसका वियोग जरूर है। जो पैदा हुआ है, वह जरूर ही मरेगा। फिर फिक्र कैसा और डर क्यों? इस तरह के विचार से इस भव का डर शीघ्र ही दूर हो जाता है।

१७—आत्मिक कल्याण के इच्छुको! अपनी आत्मा की भलाई के लिए जो चाहो सो करो, लेकिन करो सच्चाई के साथ। अपनी आत्मा को मत ठगो। अपने देवता को भ्रम में मत डालो, दुनिया को धोखा मत दो और अपनी पूजा और भक्ति को अपने आत्मिक कल्याण का रास्ता बनाओ।

१८—अब देखना यह है, कि मैं हूं कौन? मैं आत्मा हूं। पाक हूं, पवित्र हूं, चेतन हूं, देखने जानने वाला हूं, ज्ञान का खजाना हूं, शक्ति का भण्डार हूं, सुखों का केन्द्र हू और शाति का पुञ्ज हूं। गर्ज मैं हूं और सब कुछ हूं।

१९—न मैं कभी पैदा हुआ हूं, और न कभी मरा, न मुझ में जवानी है और न बुढ़ापा; न मैं छोटा हूं, न बडा; न मैं गोरा हूं, न काला; न मैं सुन्दर हू, न असुन्दर; न मैं ब्राह्मण हू न क्षत्री; न मैं हिंदू हू, न मुसलमान, न मैं स्त्री हू, न मैं मर्द; न मैं इनसान हूं, न मैं पशु, न मैं फरिश्ता हू, न शैतान, गर्ज, सच पूछो तो इनमें से मै कोई भी नही हूं। लेकिन जिस्म की वजह से मै सब कुछ हूं।

२०—कमजोर आत्माये ही विषय-भोगों मे आनन्द मनाती है। लेकिन बलवान आत्माय विषय-भोगों से जरा भी अपना मन (जो सुमेरु की तरह अचल है) चलायमान नहीं होने देती।

२१—उपदेश का प्रभाव उस ही समय पडता है कि जब समय अनुकूल होता है, अन्यथा अशुभ का उदय होते हुए बहुत सी औषधियें और उपदेश रक्खे ही रह जाते हैं।

२२—आदत का बनाना मनुष्य के अपने हाथों में है। जिस काम को मनुष्य हमेशा करता रहता है, वह आगे चल कर आदत बन जाता है।

१७

लेखांश

किसी लेखक के हृदय के भावों को जानने का साधन उसके लेख ही होते हैं। यहा जैन कवि ज्योतिप्रसाद के समाचार पत्रों तथा पुस्तकों में से कुछ उपयोगी अंश एकत्रित करदिए हैं, ताकि पाठक जैन कवि के विचारों का ज्ञान प्राप्त कर सकें और समाज उन से आज भी लाभ उठा सके। आज भी इनकी उपयोगिता उतनी है, जितनी कि इन के लिखने के समय थी। इन लेखों से जहा जैन कवि के हृदय की पीड़ा प्रकट होती है, वहाँ समाज की दशा और कुछ आन्दोलनों का भी पता लगेगा। विस्तार भय से बहुत थोड़े लेखांश ही चुने गये हैं।

(अ) जैन लोगों का जैन धर्म पर पैतृक अधिकार।

...... सच्चे जैनी लोगो! जरा पक्ष से अलग होकर न्याय से तो कहो, कि क्या जैन धर्म पर अन्य लोगों का उतना हक-अधिकार-नहीं है कि जितना तुम्हारा है? क्या यह धर्म तमाम जीवों के कल्याण करने के लिए नहीं है? क्या यह निर्वाण दीप यानी चिरागे नजात महज-तुम्हारे ही लिए है?

प्यारे धर्मज्ञ लोगो! अगर तुम ज़रा भी ग़ौर करोगे, तो तुम को साफ मालूम होजायगा, कि यह धर्म केवल हमारा ही नहीं है।

बल्कि प्राणी मात्र का कल्याण करने वाला है। अगर सच पूछो, तो तख्ते जमीन पर एक यही धर्म है, जिसके कारण बिला रोक टोक किसी जाति के रंग या और किसी भेद के इसका मानने वाला निर्वाण हासिल कर सकता है। यह इसी धर्म के मानने वालों को गर्व है, कि अगर इसका सच्चा श्रद्धानी शुद्र जाति क्या बल्कि चाण्डाल भी हो, तो भी पूजने लायक है, और वह ऊंच कौम (जाति) के मिथ्याती लोगो से हजार दर्जे क्या बल्कि इससे भी ज़ियादा बहतर है। और अगर कोई इसके मानने वालों मे (जैनियों मे) श्रद्धान से गिरा हुआ मिथ्याती पैदा हो जाय तो वह शुद्र क्या बल्कि चाण्डाल से भी कम दरजे पर है।

गर्ज़ जैन धर्म किसी ख़ास सम्प्रदाय या जमाअत का पैतृक या ख़ानदानी धर्म नहीं है, जैसा कि आज कल वैश्य लोगों ने समझ लिया है।......

जैन प्रचारक वर्ष ३, अंक ८

(आ) हिंदू मातायें।

कौन कहता है, कि हिंदू धर्म की टेक हिदू माताओं पर नहीं है ? क्या कोई कह सकता है कि दुख के समय हिदू मातायें अपने धर्म से गिर जातीं है ? जहाँ तक देखा गया है, विचार किया गया है, हिदू मातायें कभी किसी समय भी अपने धर्म से गिर जाने को तैयार नहीं होती। वह खाने की तंगी सहतीं हैं, वह फटे पुराने वस्त्र से शरीर ढाँप लेती है, वह गरमी सरदी की अनेक बाधायें सह लेती है, लेकिन क्या मजाल जो अपने धर्म से गिर जाने का ख्याल भी चित्त मे आने दें। यदि सच पूछो तो भारत में

जो हिंदू धर्म की चमक है, वह हिंदू माताओं के ही कारण है। यह अवश्य हो गया है, कि इस समय अविद्या के कारण हिंदू माताओं मे कुछ २ बुरे विचार उत्पन्न हो गए हैं। वह गाली गाती है, वह गली बाजारों मे मुंह खोले फिरती है, वह मेलो ठेलो मे ठठोलियाँ करती घूमती है, वह पीर पूजती हैं, पशुओं का बध कराती है, वह गहने कपड़े के लिए कलह करती हैं इत्यादि।

परन्तु जो शुद्ध हृदय से विचार किया जाय, तो उनका ज़रा भी दोष नहीं है, क्योंकि पुरुषों ने स्त्रियों को पढ़ाया नहीं, लिखाया नही, धर्म शिक्षा नहीं दी, धर्म का रूप नहीं बतलाया प्राचीन हिंदू माताओं के चरित्र नहीं सुनाये। अगर किया तो बस यह अन्याय किया, कि उनके सामने रंडिया नचाईं, स्वाँग खेले, मेलों मे फिरने की आज्ञा देदी, गाली का गाना सुनकर खुश हुए अर्थात वह वह कार्य किए, जिनसे कि स्त्रियों को बुरे विचारों मे पड़ने का सुभीता प्राप्त हो।

जैन नारी हितकारी, प्रथम वर्ष, अंक ४.५

(इ) समाचार पत्रों का महत्व

जिस कौम और जिस देश ने उन्नति की है, वह अधिकतया अखबारों के द्वारा ही की है। यूरोप अमेरिका और जापान आदि देश जो आज उन्नति के शिखर पर चढ़े हुए नजर आते है, वे सब अखबारों का ही प्रताप है। अखबारों ही के द्वारा उन देशों के बच्चों तक मे भी जाति और राष्ट्र की उन्नति का जोश भर गया है। वहा के मजदूर, गाडीवान और छोटी से छोटी स्थिति के लोगों को भी बिना अखबार पढ़े खाना अच्छा नहीं लगता।

अगर एक सड़क साफ करने वाले का एक हाथ झाड़ू से खाली नहीं है, तो दूसरा हाथ अखबार से खाली न मिलेगा। फिर भला वे लोग उन्नति न करें तो क्या करें?

जैन प्रदीप व०१, अ०१, पृ०१

(ई) जाति भेद को मिटा दो।

जब से बम्बई के जलसे मे बाबू अजितप्रसाद जी एम० ए० गर्वनमैन्ट प्लीडर, लखनऊ, ने बहैसियत सभापति जातिबन्धन तोड़ने और वर्ण व्यवस्था कायम रखने के बारे मे अपनी कीमती सम्मति प्रकट की थी, तब मे हम भी देखरहे थे, कि हमारी काबिलए रहम जाति इस प्रश्न पर कहां तक विचार करती है? और क्या क्या विचार करती है? इस बीच के समय मे जो नतीजा निकला है, वह यह है, कि पुराने खयालात के पुराने आदमी तो लकीर के फ़कीर ही रहना पसन्द करते हैं। इसलिए उनको तो जाति बन्धन के जाल मे जकड़ा रहना ही मंजूर है, यद्यपि वे यह भी जानते हैं, कि श्री भगवान ने वर्ण ही क़ायम किए थे, जाति भेद समय समय पर होते चले गये हैं, जिनके उत्पन्न होने का बडा भारी कारण सिवाय अज्ञान और मान कषाय के कोई नहीं है। लेकिन फिर भी यह पसन्द नहीं करते, कि एक वैश्य वर्ण का अग्रवाल दूसरे वैश्यवर्ण के खण्डेलवाल से बेटी व्यवहार कर सके। अग्रवाल उस जाति का नाम हैं, कि जिसका निकास अग्रोहा से हुआ और खण्डेल वाल जाति वह है, कि जिसका निकस खण्डेला गांव से हुआ। अगर न्याय दृष्टि से देखा जाय तो अग्रवाल जाति है, फिर इसका अग्रवालों के अन्दर

ही अन्दर नातारिशता करना और दूसरी वैश्यजातियों से घृणा या किनारा करना कहाँ तक उचित है और जेबा है ? कि हमारे ख्याल मे शास्त्रों के मुताबिक जब वर्ण भेद को ही मानना काफी हो सकता है, तो फिर यह जाति बन्धन कायम रख कर क्यों और किस लिए अवनति के गढे मे पडा रहना पसन्द किया जाता है ?

मित्रो ! अंधविश्वास का समय निकल गया । अज्ञान का अँधकार दूर होगया । और ध्यान से देखिएगा कि इस जाति बन्धन के कारण हमें किस कद्र हानि उठानी पड रही है ।

व०१, अ०१४, पृ०२२

(उ) दान परिपाटी को ठीक करो ।

आजकल जैनियों के दान की परिपाटी बडी खराब हो रही हैं । यद्यपि इनके शास्त्र पुकार पुकार कर विद्यादान आहारदान, औषधिदान और अभय दान देन का उपदेश कर रहे हैं, लेकिन खेद है, कि ये अपने अज्ञान की वजह से इस तरफ जरा भी ध्यान नहीं करते और बल्कि शास्त्र विरुद्ध दान देते हैं । हमारे ख्याल मे इस समय विद्यादान की बहुत बडी सख्त जरूरत है । विद्यादान करने के लिए इस समय जैनियों मे बडी गुंजायश है ।

व० १, अं० १५, पृ० २?

(ऊ) वीर बन कर कुरीतियों को दूर करो ।

जैन समाज में बहुत सी कुरीतिया जारी है, जिनका दूर होना बडा जरूरी है । लेकिन वे बिना बहादुर और दिलावर आदमियों के कदापि दूर नहीं हो सकती । इस वजह से धर्मात्मा भाइयों

और प्रदीप के पढने वालों से हमारी प्रार्थना है, कि वे हिम्मत करें और बहादुर बनें। इस बात का जरा भी ख्याल न करे, हमारा साथ और भी कोई देगा या नहीं। बस बहादुर बनकर जो जो कुरीतियाँ मालूम हों और नुकसान देने वाली समझी जाएं और धर्म के विरुद्ध हों उनको बहुत जल्द निकाल देवें। अगर ऐसे काम मे हिम्मत करते हुए अन्य भोले और नादान भाई उनसे द्वेष करें और हानि पहुंचाने के लिए तय्यार हो जाये, तो उसको सहन करते हुए भी अपना काम करें। ऐसा करने से कुछ ही समय मे आप देखोगे, कि जैन समाज मे कुरीतियों और संसार की व्यर्थ बातों का निशान तक न पाएगा और सब तरह से धर्म का ही चमत्कार नजर आने लगेगा।

व० २, अंक ५, पृ० ११

(ऋ) स्त्री शिक्षा की आवश्यकता।

स्त्रियों का शिक्षित होना बहुत ही आवश्यक है, और यह बात साफ तौर से नजर आरही है। आज हम लोगों के घर जो नर्क के बराबर नजर आरहे हैं, उनमे खास कारण स्त्रियों मे शिक्षा का न होना ही है। जिन घरों में स्त्रियां शिक्षिता है, वे अब भी स्वर्ग के समान नजर आरहे है। धन्य हैं वे शहर वे समाज और वे लोग, कि जो लडकों की तरह से लड़कियों के लिए भी शिक्षा का दरवाजा खोले हुए हैं या खोल रहे हैं। जैनसमाज मे भी अब लड़कियों को शिक्षा देने का रिवाज चल निकला है, जो हमारे सौभाग्य का कारण है। लेकिन अफसोस कि अब तक ऐसी पुस्तके बहुत कम देखने मे आई हैं कि जो लड़कियों को पढ़ाने

के काम मे लाई जाएं। यह कमी बहुत अधिक अनुभव हो रही है। विश्वास है कि यह कमी कोई जैन विद्वान दूर करेंगे और यह भी विश्वास है कि जहां पर लडकियों की पाठशालायें नहीं हैं वहां के भाई इस तरफ ध्यान देकर काफी प्रबंध करेंगे।

व० ५, अंक१,२, पृ० १६

(ऋ) क्या जैन समाज धनी है ?

इस बात का दावा बडे गर्व के साथ किया जाता है कि जैन कौम बड़ी दौलतमन्द है। सम्भव है कि यह दावा किसी जमाने में ठीक हो, लेकिन मौजूदा ज़माने मे इसके अन्दर ज़रा भी सचाई नहीं है। क्या हुआ जो इस मान्य समाज के अन्दर इने गिने लोग मालदार नजर आही गए। उनकी मालदारी के कारण कुल कौम का मालदार होना असम्भव है। पिछले दिनों श्वेताम्बर समाज के साधु मुनि मानक जी देहली स अजमेर तक पैदल ही गये थे। आपने अपनी रिपोर्ट मे लिखा था, कि देहली से अजमेर तक बहुत से गांव ऐसे आए हैं, कि जिनमें जैनियो के घर मौजूद है, लेकिन इन मे सहस्रों जैनी इतने गरीब हैं, कि उनको एक वक्त रोटी भी मुश्किल से मिलती है। इसके अतिरिक्त हमको अपना स्वय का अनुभव है, कि जैनी लोगों की माली हालत बहुत गिर गई है। सैकडों गरीब भाईयों से हम खुद मिले हैं, कि जो अपनी तंगदस्ती की शिकायत ऐसे दर्द भरे शब्दों में करते हैं, कि जिसको सुनकर दिल पर बडी भारी चोट लगती है और हम अपने धनी होने का दावा गल्त ख्याल करते हैं। हमको ऐसी हालत देखकर सख्त अफ़सोस होता है, कि कहा तो समाज के

धनी होने का दावा और कहां यह निर्धनता की हालत। ऐसी हालत में समाज क्या खाक उन्नति कर सकती है और क्या खाक धर्म साधन कर सकती है ? जब कि निर्धन लोगों को पेट की आग बुझाने का भी फिकर नहीं छोडता तब भला वे क्या खाक काम कर सकते हैं। अमीर लोग पहिले तो इस समाज मे न होने के ही बराबर है और अगर कुछ है भी, तो उनको सिवाय खाने-पीने और मौज उडाने के दूसरी बात का ख्याल तक ही नहीं है। वे गरीब भाइयों की तरफ जरा भी आंख उठा कर नहीं देखते, उनको भूखे मरते भाईयों का जरा भी ख्याल नहीं है। यद्यपि ऐसे अमीर लोगों का लाखों रुपया विवाह शादियों मे खर्च होता है, रण्डियों के नाच नचाए जाते है, नक्कालों की नकलें कराई जाती हैं, कागज़ की बाग़ बहारी लुटाई जाती है, लक्ष्मी देवी भर २ हाथ बुरी तरह से बखेरी जाती है। और इस ही प्रकार के सैकड़ो खर्च किए जाते हैं। इसके अतिरिक्त मेलों ठेलों मे, पूजा प्रतिष्ठाओ मे भी लाखों रुपये हर साल लगाए जाते है, लेकिन इस क़दर धन लुटाते हुए भी ग़रीब भाइयो के लिए एक फूटी कौड़ी नहीं दी जाती। गरीब भाई बेरोजगार हाथ पर हाथ धरे बैठे हैं। क्या मजाल जो कोई अमीर आदमी उनको सहायता देकर आजीविका पर लगा दे। गरीब घर के लड़के शिक्षा प्राप्त करने के लिये रोते फिरते है। लेकिन कोई भी धनी कहलाने वाला जैनी उनकी इस पुकार को नहीं सुनता। कितनी ही ग़रीब स्त्रिया तंगदस्ती के कारण भूखी नंगी टूटी फूटी चहारदीवारियों के भीतर बुरे हालों पड़ी हुई हैं, लेकिन कोई भी माई का लाल उनकी इस तंगदस्ती को दूर करने

के लिए तय्यार नहीं है। बस कहना पड़ता है, कि ऐसी हालत में जैन समाज का दौलतमन्द धनी-होने के दावा और गर्व गलत है। हमारा अपना ख्याल है कि जब तक समाज रुपये को उचित-रूप से खर्च करना नहीं सीखेगा, जब तक फिजूल खर्ची से मुंह नहीं मोड़ेगी और बिना जरूरत मेलो ठेलों के लगाने से परहेज नही करेगी, तब तक इसका दौलतमन्द होना कठिन ही नहीं, वरन असम्भव है। और इस समाज की उन्नति होना उतना ही कठिन है, कि जितना बिनइंजन के गाड़ियों का एक कदम चलना।

(लृ) जैन मन्दिरों की रचना।

.... जिन लोगा को वैराग्य की शिक्षा प्राप्त करने शौक़ है, जो वैराग्य की शिक्षा को अपनी आत्मा के कल्याण का साधन समझते है, व किसी ऐसे विद्यालय का सहारा तलाश करते है कि जहां पर उद्देश्य पूरा हो सके और वैराग्य की शिक्षा पूरी हो जाय। यही कारण है कि जैनी लोग अपनी आत्मा के कल्याण करने के वास्ते एक वैराग्यमयी, शात स्वरूपी आनन्द दायक और ध्यानावस्था की मूर्ति का सहारा लेते हैं। यह वीतराग मूर्ति इनके हृदयों मे वैराग्य की शिक्षा जमा देने का एक खास साधन है और इस साधन से उद्देश्य पूर्ति आसानी के साथ हो सकती है। लेकिन अब प्रश्न यह उठता हैं, कि वैराग्य की शिक्षा के लिए जैनियों के वर्तमान मन्दिर कहाँ तक सहायक बन सकते है। आया मौजूदा जमाने ये उद्देश्यपूर्ति हो सकती है। या नही। कहने और लिखने की तो बहुत गुंजाइश है, लेकिन हम देखते है कि आज कल धनी आदमी अपना शौक़ पूरा करने की गर्ज

से जैन मन्दिरों मे सोने चाँदी की लिपाई कराते हैं। उनकी दीवारों पर रंगा रंग की नक्काशी कराते है, ज़र दोज़ी परदे चन्दोए लट काते हैं। सोने चाँदी की छड़े खड़ी करते है, जडाऊ काम के चंवर छत्र लगाते है। गर्ज उस वैराग्य के कालिज को नव्वाबो और बादशाहों के राग भरे महल से किसी कद्र ज्यादा ही बनादेते है। अब वह वैराग्य की शिक्षा का इच्छुक जब मन्दिरों के अन्दर जाता है, तो वहाँ की शाही रचना को देख देखकर चका चौंध हो जाता है, राग भरे कारणों मे उलझ कर वैराग्य के पाठ को भूल जाता है, सोने चादी के समान मे फंस जाता है, जरदोजी परदो मे जा गिरता है, रंग २ की नक्काशी देखने मे समय खो देता है और जिस काम के लिए गया था, उसको बिलकुल भूल जाता है। ··· ···· यदि यही उद्देश्य है कि वैराग्य की शिक्षा प्राप्त करें, परिणामों मे शांति पैदा करे और पाप की प्रकृति का नाश करें, तो कहना पड़ेगा कि ऐसी हालत में जैन मन्दिरों के अन्दर सोने चादी की पुताई की कोई जरूरत नहीं है, बल्कि एक साफ़ और अच्छे मकान मे एक बहुत बडी विशाल मूर्ति होनी चाहिये, जिसके दर्शन से वैराग्य की शिक्षा प्राप्त हो। परिणामों मे शाँति पैदा हो। ··· ·· ··· हमारे उद्देश्य की पूर्ति का अगर कोई साधन है तो ज्ञान और वैराग्य है, न कि सोने चाँदी के चॅवर छत्र आदि।

········· अगर इस कद्र रुपया ज्ञान के प्रचार में लगाओ, तो निस्सन्देह दुनिया भर का कल्याण हो जाय और महावीर स्वामी का उपदेश हरा भरा हो जाय। उनकी पवित्र वाणी पुकार

पुकार कर कह रही है, कि दुनिया के हर एक जीव तक मेरे उपदेश पहुँचे।

व० ४ अंक १८

(लृ) स्त्रियों को पूजन अधिकार है।

स्त्री पर्य्याय का धारी जीव पूजन कर सकता है। हम नहीं जानते कि हमारे भाइयों ने पूनन करने को क्या हाऊ (भय दायक वस्तु) बना रक्खा है। अरे भाइयों ! साफ और शुद्ध द्रव्य को भाव और विनयपूर्वक श्रीभगवान की वीतराग प्रतिमा के आगे चढ़ाने का नाम ही पूजा है, या और कुछ ? अगर इस ही का नाम पूजा है, तो यह हर एक शहर मे, गांव मे यानी जहाँ पर भी जैन मन्दिर मौजूद है, सब औरत मर्द पूजन करते हैं और प्रति दिन करते हैं। और यदि आपने मन्दिर जी मे रक्खे धोती दुपट्टा पहिन कर पूजन करना समझ रक्खा हो, और उस धोती दुपट्टे ही की वजह से मना करते हो तो दूसरी बात है। यह आपका धोती दुपट्टा विश्वव्यापी नहीं है, यानी भारत वर्ष भर के जैनियो को मान्य नहीं है। यह अपने रीति रिवाज की बात है। शास्त्रों मे किसी जगह पर यह लिखा नहीं देखागया कि अमुक राजा ने या धर्मात्मा ने मन्दिर जी मे आकर कपड़े बदले और सामग्री धोई, तब भगवान की पूजा की। बल्कि यह बहुत जगह लिखा है, कि साफ और शुद्ध द्रव्य बनाकर मन्दिर जी लाए और पूजा की। जिससे प्रमाणित होता है कि अपने घर पर स्नान करके साफ सुथरे कपड़े पहिन कर के और पवित्र द्रव्य लेकर मन्दिर जी में आकर भगवान का पूजन करना चाहिये। लेकिन

आजकल स्नान तो घर पर कर लेते हैं मगर कपड़े मन्दिर में जाकर बदलते हैं, जिससे मालूम होता है कि हमारे घरों की क्रियाएं भ्रष्ट हो गई हैं, जो कपड़े अपने शुद्ध भी नहीं रहते कि जो भगवान का पूजन भी कर सकें। इस लिए मन्दिर में कपड़े रखने का रिवाज डालना पड़ा।

खैर, कुछ हो। परन्तु स्त्रियों को पूजन करने का अधिकार है और बहुत सी जगहों पर करती हैं। हाँ, निस्सन्देह न्हवन यानी प्रतिमा का प्रक्षाल वह नहीं कर सकती। इसके लिए देखो "जिन पूजाधिकार मीमांसा" रचयिता प० जुगल किशोर जी मुख्तार देवबन्द।

व० २, अंक २३, पृ० १५

(ए) स्त्रियों की दशा।

इसमें सन्देह नहीं कि आज कल स्त्री समाज की बहुत बुरी दशा है। स्वार्थी पुरुषों ने इस को बुरी तरह से पैरों के तले कुचल रखा है। इसको चार दीवारी के अंदर इस प्रकार कैद किया है, कि आनन्ददायक वायु के झोंकों से यह समाज काली कोसों दूर पड़ा है। स्त्री का नाम घृणा की दृष्टि से देखा जाता है। इससे कौन इन्कार कर सकता है कि जिस घर में लड़की पैदा होती है, प्रसन्नता के स्थान पर अप्रसन्नता छा जाती है? पुरस्कार आदि जो लड़के के होने में बांटे जाते हैं, उनके बजाय वहां चेहरे अप्रसन्न नजर आया करते हैं। इसका यही कारण है, कि स्त्री समाज की कुछ भी कद्र पुरुषों की दृष्टि में नहीं है।

(ऐ) समाज सुधार या राजनैतिक काम।

मैं पौलिटिकल—राजनैतिक—जीवन को दिल—ओ-जान से पसन्द करता हूँ, लेकिन मेरा ख्याल विद्यार्थी काल से कुछ ऐसा रहा है, कि 'घर मे दिया जलाकर मन्दिर मे फिर जलाना'। यानी पहिले अपने को किसी काबिल बनाया जाय, अपनी समाज की गिरी पड़ी हालत को ठीक किया जाय और फिर राजनैतिक क्षेत्र मे आया जाय और कामयाबी (सफलता) प्राप्त की जाय। सफलता की कुँजी अपने को काबिल बनाना है, लेकिन जबतक अपने को क़ाबिल न बना लिया जाय, समाज का सुधार ठीक न कर लिया जाय और राजनैतिक उद्देश्य को न समझ लिया जाय, तब तक राजनैतिक मैदान मे कदम रखना कहां तक ठीक है, यह आगे चलकर जमाना स्वयं ही बतायेगा।

जैन प्रदीप व०८ (सन् १९२१) अंक ३, पृ० १४

(ओ) सन्तान निग्रह।

एक बाग़ का हुशियार और अनुभवी माली जहा बाग़ की परवरिश और उन्नति के लिए यत्न करता है, वहाँ यह भी ज़रूर करता है, कि जो पौदे कमज़ोर या एक क्यारी में ज़ियादती के साथ पैदा हो जाते हैं, उन सब को काट कर फैंक देता है। और जिन पोदों या दरख्तों मे कमज़ोर और घनी शाखे फूट पड़ती हैं, उन सब को छाँट डालता है। ... ...

एक हुशियार माली उतना ही बाग लगाता है, जितना कि वह परवरिश कर सके। और तब ही वह सफल होता है। अगर वह आदमी ताक़त से ज़ियादा काम करता है, तो कहा जायगा,

कि वह अपनी कीमती ताकत का व्यर्थ इस्तेमाल करता है। लेकिन उससे नफा कुछ नहीं होता, बल्कि खुद मुसीबत में पड़ता है। ... ...

इसी तरह से जो देश या समाज इन्सानी पैदावार मे होशियारी और अनुभ से काम लेता है, वह फूलता है, फलता है और ज़िन्दा रहता है। ... ... दूर क्यो जाते हो। अपने ही समाज को देखो। ... . जिस समाज मे बूढ़े, बच्चे, जाहिल, आलसी, रोगी, शोगी, दरिद्री, सड़ियल, मरियल, कम उम्र, कमजोर, गरज सबही उतपत्ति के क्षेत्र को बढ़ा रहे है और धड़ाधड़ ऐसे बच्चे पैदा कर रहे हैं, कि जो अपने अस्तित्व को भी क़ायम नहीं कर सकते, तो भला वह समाज किस तरह जिन्दा रह सकती है? ... ...

हम देखते हैं, कि इस देश के भिक मंगे तक औलाद पैदा करने मे लगे हुए हैं, जो स्वयं अपना गुज़ारा दर दर के टुकड़ो से कर रहे हैं। ....

इस तरह से कमज़ोर संतान की बदौलत समाज को रंज और नुक़सान दोनों सहन करने पड़ रहे हैं। इसलिए अब ज़रूरत मालूम होती है कि क्या न ऐसे तरीके इख्तियार किए जाँयें, कि जिनसे समाज का अस्तित्व कायम रह सके। ... ...

हमारी राय मे इसके लिए ना काबिल सन्तान की पैदायश का ज़रिया बन्द कर देना बहुत लाभ दायक हो सकता है।

व० ६, अंक ९, पृ० १४

(औ) दश लाक्षणी पर्व में हमको क्या करना चाहिये ?

ये दस दिन आपके हर तरह से धर्म ध्यान मे ही व्यतीत होंगे और आप लोग धर्म के हर एक काम को शक्ति से बढ़कर ही करेंगे। प्रातःकाल पूजन करोगे, तब आप कीमती सामग्री से करोगे; शास्त्र पढ़ोगे, तब हमेशा की निस्बत कुछ जियादा देर तक पढ़ोगे; व्रत आदि करोगे, तब महान मुशकिल करोगे, दान दोगे, तब दिल खोल कर दोगे; गाना बजाना करोगे, तब बड़ी शान के साथ कराओगे; और जो उत्सव आदि का ठाठ रचोगे, तो वह भी बडी भारी खूबसूरती और लागत के साथ रचोगे। गर्ज, धर्म के नाम से जो काम भी आप करोगे, वह हर तरह से दिलचस्पी को ही लेकर करोगे। जिन मन्दिरों मे साल के ३६० दिनों तक पूजन न होता हो, शास्त्र न पढा जाता हो, झाड़ू देकर कूडा करकट भी साफ़ न किया जाता हो, लेकिन इन दिनों मे उन मन्दिरों के भी भाग खुलजाते हैं।·· ······

लेकिन गौर करने से यही मालूम होता है, कि आज कल यह महान पर्व भी अन्य तीज त्योहारो की तरह से एक त्योहार बन गया है।··· ···

व्रत करो और खूब करो। लेकिन करो विधि के साथ। केवल भूखे मरने का नाम व्रत नहीं है। और न भूखा मरना किसी बुद्धिमत्ता में दाखिल है। श्री समन्त भद्र आचार्य ने रत्न करण्ड श्रावकाचार मे लिखा है, कि व्रत के दिनों मे पांच पापों का त्याग करो। ·· ···

प्रभावना करो, और सच्ची प्रभावना करो। उनके लिए कौन

रोकता है ? बाज़ार के बीच को काठ के हाथी घोड़े निकालना, या बाजों गाजों का बजवाना, या गाने नाचने के अखाड़े जोड़ना, या चांदी सोने के चंवर छत्र आदि दिखलाना कोई प्रभावना नहीं है। इसका नाम तो अपनी अमीरी या पानी दिखलाना है। सच्ची प्रभावना तो आपका असली जीवन है।··· ·· ···

गर्ज़, जो भी करो, सब सचाई और वास्तविकता को लेकर करो। बनावटी बातों में या पोच बातों में, या लोग दिखलावे की कारवाई में न धर्म है और न हो सकता है। धर्म तो वास्तविकता में है। और धर्म की वास्तविकता तब आयगी कि जब आप उसकी इच्छा करेंगे। लेकिन यह याद रहे, कि जब तक वास्तविकता को प्राप्त नहीं करोगे, तब तक धर्म से कोसों दूर पड़े रहोगे और दस लक्षण धर्म जैसे पवित्र पर्व से कुछ भी फायदा न उठा सकोगे। इसके अतिरिक्त एक काम निहायत ज़रूरी और भी है, और वह है सामाजिक रस्मोरिवाज का सुधार।··· ···अगर कुछ हो सके तो इन पवित्र दिनों में अपनी समाज की गिरी पड़ी हालत का विचार करके इन मौजूदा रीति रिवाजका सुधार करते हुए समाज को फ़िज़ूल खर्ची के जबरदस्त चुंगल से निकाल दो। यह भी एक धर्म का महान कारज है।

व० ६, अंक २१, पृ०१

(अ) इन्द्रियों की दासता

इन्द्रियों के दासत्व और विपदों के आधिपत्य ने मनुष्य मात्र को ऐसा स्वार्थी बना दिया है, कि यह दूसरों के अधिकारों को पद-दलित करते हुए अपने ही स्वार्थ-साधन मे आयु पर्यन्त लगा रहता है। चाहे दूसरों का जीवन भ्रष्ट हो जाय या किसी का सत्ता नष्ट हो जाय, परन्तु इनके स्वार्थ-साधन मे किसी प्रकार की भी बाधा न पड़े। बस यही इनके जीवन का मुख्योद्देश्य बना हुआ है।

काया पलट पृ० १

(आ) चौधरियों की करतूत !

क्या कहें कुछ कहे से बनता नहीं। इन चौधरी चुकडानतों ने बिरादरी का बिल्कुल सत्यानाश कर रक्खा है। इन्हीं लोगों के हाथों मे बिरादरी की बागडोर है। वह जिस तरफ का चाहे मोड दे। और बिरादरी की वह भेडा चाल है; कि जो कहीं नहीं जाती। कोई भी आदमी यह नहीं देखता, कि आगे कुआ है या खाई, गिरेंगे या मरेंगे। बस एक के पीछे एक जाता है। और अरर धम करके गिर जाता है। फिर पता तक नहीं लगता कि क्या हुआ और कहां गया। इन चौधरियों ने ही तो हम लोगों को बन्दर की तरह से नचा रक्खा है। सच पूछिये तो ये लोग बडी ही नीच प्रकृति के आदमी हैं। इनकी बेशर्मी, बेहयायी, बेरहमी,

और खुद गरजी बहुत ज्यादा बढ़ी हुई है। हजार कसमे खालें हजार नेम उठालें, परन्तु करेंगे वही जो मन में समाई हो। इन लोगों को तो खाने के लिये मिठाई और जेब के लिये टके चाहिये। और जो चाहो सो करालो। झूट बुलवाओ, खुशामद करालो, लड़वालो, झगड़वालो, और चाहे जिसका बुरा करालो। ये लोग धर्म अधर्म की जरा भी पर्वाह नहीं करते और बेधड़क होकर सब कुछ कर बैठते हैं।

कायापलट, पृ० १३

(क) बिरादरी का कसूर।

पर कसूर बिरादरी का भी है। वह क्यों लड्डू कचौरियों के लोभ मे आकर ऐसे विवाहों मे शरीक होती है? वह क्यों ऐसे चौधरियों को फटकार नहीं देती? जो हमारा बुरा चाहे वही हमारा दुश्मन फिर दुश्मन को क्यों दोस्त बनावें? वह तो अस्तीन के साप की तरह जब दांव पायगा तब ही डस लेगा। भाई साहिब, बिरादरी को ऐसे लोगों से बचना चाहिये और इनको घृणा की दृष्टि से देखना चाहिये। इन लोगों ने बिरादरी की दुर्दशा बनाने मे कोई भी कसर नहीं छोड़ी। आज जो समाज के अन्दर बाल-विधवाए दीख रही है, यह सब इन्हीं चौधरी लोगो की करतूत है। परन्तु ऐसे जालिमों के पंजे मे पड़े रहना और "सी" तक न करना, यह तो समाज की ही खता है। यदि समाज

चाहे, तो सब कुछ प्रवन्ध हो सकता है और बहुत ही शीघ्र हो सकता है।

कायापलट पृ० १४

(ख) मनुष्य के परिणाम।

संसारी जीवों के परिणाम सर्वथा भिन्न-भिन्न हैं। किसी के परिणाम शुभ रूप है, और किसी के अशुभ रूप हैं और किसी २ के इन दोनों से भिन्न अर्थात् वीतराग रूप हैं। शुभ परिणामों से पुण्य का वन्ध होकर सुख मिलता है। अशुभ परिणामों से पाप का बन्ध होकर दुख प्राप्त होता है। और वीतराग भावों से पुण्य, पाप दोनों का ही बन्धन होकर जीव सर्वथा निर्वन्ध दशा को प्राप्त हो जाता है। अर्थात सोने और लोहे की बेडी से मुक्त हो निजनान्द रूप (अमर पद) को पा लेता है।

कायापालट, पृ० ३३

(ग) किसानों की दुर्दशा।

हमारे देश की आमदनी सिर्फ जमीन की पैदावार के आश्रित है और यह पैदावार होती है ,किसान लोगों के द्वारा। परन्तु आपने यह भी देखा होगा कि जो किसान लोग देश की आमदनी के दाँये हाथ हैं उनकी दशा बहुत ही हीन है। वे पेट भर रोटी भी नहीं खा पाते। उनके सिवाय जुलाहे, लुहार, बढई, चमार, रंगसाज अर्थात सब ही रोटी से तंग नज़र आते हैं यही

कारण है कि हमारे देश मे भिख मंगों की संख्या आधे करोड़ से भी कुछ अधिक कही जाती है।

कायापलट, पृ० ८७

(घ) दान की दूषित परिपाटी।

दान की परिपाटी के सुधार करने की आवश्यकता है। हिन्दु समाज का करोड़ों रुपया वार्षिक दान के नाम से व्यय होता है और वह सब व्यर्थ हो जाता है तीर्थ स्थानों में पण्डे, पुरोहित, सन्त, महन्त, भट्टारक नाम मात्र के साधू सब उड़ा जाते हैं। दान का दुरुपयोग यदि कोई देखना चाहता है, तो हरिद्वार जैसे तीर्थों पर देख सकते है।

जिस प्रकार दान के महत्व को हिन्दु समाज ने गिरा दिया है, ठीक उसी तरह से मेरी जैन समाज ने भी दान की परिपाटी का परिवर्तन कर डाला है। जैन शास्त्रों में दान की व्याख्या भले प्रकार की गई है। और इसको खूब ही महत्व दिया गया है। परन्तु अब तो जैन समाज मे भी लकड़ी के रंगीन हाथी घोड़े बनवाना मन्दिरों मे सोने के बेल बूटे कराना, पूजा प्रतिष्ठा रचाना। जैन नाटक खेलना, विवाहों में बखेर करना, मरने में नुकता करना और खेल तमाशों मे चन्दा देना ही दान समझा जाने लगा है। जिसके कारण धार्मिक और सामाजिक कार्यों मे एक प्रकार से त्रुटियें नजर आने लगी है। देश के दीन दरिद्री पुरुषों की और गरीब किसानों की बहुत बुरी अवस्था है, परन्तु इसके लिये पैसा कहाँ जब दूसरे अनावश्यक कार्यों से पैसा बच जाय। तब सच्चे

दान मे लग सकता है। इसलिये मैं भी दान की प्रथा के सुधार को आवश्यक समझता हूं।

कायपलट, पृ० ९०

(ङ) परावलम्बन और स्वावलम्बन।

किसी भी देश के मनुष्य जब दूसरों के हाथ में अपने जीवन की बागडोर देकर आप सर्वथा निश्चिन्त होकर बैठ जाते हैं। तब वे दासत्व की जंजीरों मे जकडे जाकर नाना प्रकार के संकट भोगते हैं, और उनके आलस, निरुद्यम, दुखः, चिन्ता, रोग, शोक, भय, विघ्न, दरिद्र और निर्धनता आदि मित्र बन जाते हैं। ऐसे पराश्रित पुरुष दूसरों के द्वारा पद दलित होते हुए और अपने अमूल्य जीवन को पालित पशुओं की भाति व्यतीत करते हुए काल के विकराल गाल मे जा पडते हैं, परन्तु जिस देश या समाज के मनुष्य स्वय अपने घुटनों के बल खडे होकर अपनी भुजाओं के बल से काम लेते है वे संसार मे स्वतन्त्रता पूर्वक सुख शान्ति के साथ जीवन व्यतीत करते हैं और अन्त समय मे आनन्द के साथ हंसते खेलते मृत्यु की सुखमई गोद मे जा विराजते है।

कायापलट, पृ० १९८

(च) स्त्रियों की जिम्मेदारी।

स्त्रियों की जिम्मेदारी घर गृहस्थी के कार्यों मे पुरुषों से कहीं बढकर मे। जहा पुरुषों का कर्तव्य अपने व्यापार धन्धे का प्रबंध

करते हुये द्रव्योपार्जन करना है, वहां स्त्रियों का कर्तव्य उस धन का सदुपयोग करना और घर की बात बनाये रखना है। इसीसे कहा जाता है कि जैसे तालाब की शोभा कमल पुष्पों से है, तैसे ही घर की शोभा सद्गृहणी से है। सद्गृहणी अपन सुप्रबंध से घर को स्वर्ग के समान सुन्दर बना देती है। उसके घर में स्वर्ग जैसा आनन्द प्राप्त होता है और फूहड़ स्त्री अपने कुप्रबन्ध से घर को नर्क से भी अधिक क्लेश देने वाला बना देती है। इसी लिये ब्याही बहू को प्रारम्भ से ही सद्गृहणी बनने का उद्योग करना चाहिये। इसी से उसका अपना हित है और इसी से दोनों कुलों की मर्यादा सुरक्षित रह सकती है।

गृहस्थ शिक्षा, १०६

१८—कविताएँ

१—जैन झण्डा गायन।

ऊंचा झण्डा जिन शासन का, धर्म अहिंसा दिग्दर्शन, का ॥
गङ्गा का ज्यों निर्मल जल है, कांति शशि की ज्यों निर्मल है।
त्यों यह झण्डा परम धवल है, मैल हरे सब ही के मन का ॥
ऊंचा झण्डा जिन शासन का० ॥१॥

प्रेम से पूरित इसके धागे, वात्सल्य के रस मे पागे।
इसे देख कायरता भागे, मन्त्र पढ़ावे निर्भयपन का ॥
ऊंचा झण्डा जिन शासन का ॥२॥

हिय उङ्गग उत्साह बढ़ावे, कर्मवीर बनना सिखलावे।
सेवा भाव का पाठ पढावे, पथ परदर्शक यह वीरन का ॥
ऊचा झण्डा जिन शासन का ॥३॥

सब से ऊंचे पर फहरावे, करुणा रस का स्रोत बहावे।
शिवमन्दिर का मार्ग दिखावे, कारण है यह अघनाशन का ॥
ऊंचा झण्डा जिन शासन का ॥४॥

शुभ लेश्या का पाठ पढ़ाता, धर्म ध्यान का ध्यान दिलाता।
रत्नत्रयनिधि का है दाता, और विधाता शुभ भावन का ॥
ऊचा झण्डा जिन शासन का ॥५॥

जैन मात्र का है यह प्यारा, या से सब मिल वचन उचारा।
ऊंचा झण्डा रहे हमारा, यह सद्भाव सभी के मन का ॥
ऊंचा झण्डा जिन शासन का ॥६॥

फर फर झण्डा फहराता है, शान्ति विश्व में फैलाता है।
धर्म अहिंसा दर्शाता है, परम हितैषी जग जीवन का ॥

ऊंचा झण्डा जिन शासन का ॥७॥

या झण्डे नीचे तुम आओ, प्रेम सहित औरों को लाओ।
सब मिल 'ज्योति' भावना भावो, हो कल्याण सभी जग जन का ॥
ऊंचा झण्डा जिन शासन का, धर्म अहिंसा दिग्दर्शन का ॥८

२-नित्य प्रार्थना

हे! गुण आगर करुणा सागर, ज्ञा. उजागर दयानिधान।
हाथ जोड़ हम शीश नमावें, तव गुण गावें हे भगवान,
करें प्रार्थना शुद्ध हृदय से, सुनियेगा भगवन्न पुकार ॥
पड़े हुए हम दुख सागर में, पकड़ हाथ लो वेग उबार ॥

(२)

फैल रहा अज्ञान अन्धेरा, नहीं हिताहित सूझे ईश।
ज्ञान सूर्य का करो उजाला, हित मग सूझ जाय जगदीश ॥
भरो हमारे हृदय आत्मबल, शक्तिवन्त हो हम भगवान।
कर्मवीर बन जांय, हमारा हो जीवन आदर्श महान ॥

(३)

सब जीवों पर रहे मैत्री, भाव न मन में आवे द्वेष।
गुणी जनों को देख, मुदित मन होय, घृणा नहिं व्यापे लेश ॥
दीन दुखी जीवों पर करुणा, भाव हमारा रहे सदीव।
ममता भाव गहे हम उन पर, वैर विरोध धरे जो जीव ॥

(४)

नहीं सतावें किसी जीव को, पहुचावें सबको सुख चैन।
प्राण जांय तो जांय भले ही, कभी न बोलें झूठे बैन

पर धन सम्पति रज सम जानें, करें नहीं चोरी का ध्यान।
गहें शील व्रत पर बनिता को, समझें माता भगिनि समान* ॥

(५)

सरल सुखद शुभ रूप बनावे, जीवन इच्छा भाव घटाय।
पीवें तोष सुधाकर हम सब, मन से तृष्णा भाव नसाय ॥
क्रोध करें नहिं किसी बात पर, उर में धरें क्षमा सुखदान।
मान करें नहिं किसी वस्तु का, विनयवान हम हों भगवान ॥

(६)

माया चारी भाव विकारी, दुखकारी दें तिन को त्याग।
'लोभ पाप का बाप' न जावें पास, न गावें उसके राग ॥
बनें तपस्वी तपें तपस्या, स्वार्थ त्याग की कठिन महान।
नहीं मृत्यु तक से भय खावें, ऐसे निर्भय हों बलवान ॥

(७)

द्यूत व्यसन, मद, माँस मधू का, त्याग करें नहिं गहें कदा।
सब जीवों का हित निशदिन हो, तन मन धन से चाहें सदा।
भारत वर्ष हमारा पालक, हम उसकी प्यारी सन्तान।
समय पड़े पर देश भक्ति हित, प्राणों तक का दें बलिदान ॥

(८)

तन पर पहिने वस्त्र स्वदेशी, शुद्ध करें हम भोजन पान।
सदाचार का पाठ पढ़ें नित, राम, कृष्ण बुध वीर समान ॥

---

*पूज्य देवियाँ इस पद को ऐसे पढ़ें। "गहें शील व्रत पर भरता को, समझें भाई पिता समान।"

धर्म हमारा जी से प्यारा, तन, मन, धन से करें प्रचार।
प्राण जाँय पर धर्म न जाये, धर्म करे आतम उद्धार॥

(९)

करें जाति की सेवा हिल मिल, सेवक बन स्वारथ परिहार।
जो जो फैली बुरी रूढ़ियें. उन सब का हम करें सुधार॥
बाल अनाथ निराश्रय देवी, दीन दुखी रोगी नर नार।
तिनकी सेवा करें हरे दुख, ऊंच नीच का भेद निवार॥

(१०)

प्रेमामृत पीकर हे! भगवन, बनें सभी प्रेमी संसार।
घर घर बाजे बजें प्रेम के, "प्रेम प्रेम" की हो झनकार॥
यही भावना निशदिन अपनी, यही प्रार्थना बारम्बार।
जगे हृदय में "ज्योति" ज्ञान की, हो जगजीवों का उपकार॥

शुभम्

——×——

३—सृष्टि कर्तृत्व मीमांसा

(१)

कर्तावादी कहैं जीव का कर्ता हर्ता परमेश्वर।
सृष्टि को रच जीव बनाये इसमें सन्देह पड़े नजर॥
अगर रची सृष्टि ईश्वरने फिर क्यों अन्तर दिया है डाल।
एक सुखी एक दु:खी बनाया एक धनी निर्धन कंगाल॥
ऊंच नीच क्यों पुरुष बनाये एक दयालु एक चण्डाल।
सब जीवों पर सम दृष्टी क्यों रही न इसका कहिये हाल॥
अगर कहो अपने भक्तों को वह रखता हरदम खुशहाल।
करे बुराई जो ईश्वर की उसे देत दु:ख अति विकराल॥
तो खुशामदी हुआ ईश, है बड़ा दोष यह करिये ख्याल।
अगर कहो अनुसार कर्म के देता है सुख दु:ख धन माल॥
तब तो यह बताओ जीव के संग कर्म लगे क्योंकर।
सृष्टि को रच जीव बनाये इसमें सन्देह पड़े नजर॥

(२)

जब ईश्वर ने प्रथम जीव को पैदा किया जगत् के माँह।
उस दम कर्म जीव के संग में लगे हुवे थे याकि नांह॥
अगर कहोगे कर्म संग थे यह तो बात हुई बे राह।
किये कर्म बिन कर्म कहा से लगे जीव क्यों हुआ तबाह॥

अगर कहोगे कर्म नहीं थे सग जीव के जन्मत वार।
फिर वह आये कर्म कहां से इसका बतलाओ विस्तार ॥
किये कर्म क्यों पैदा ईश ने करे जीव को जो लाचार।
कोप जीव पर किया ईश ने क्यों दुख सुख यह दीन्हा डार।
झूंठ बात यह हुई सरासर मनमे समझो जरा चतुर ॥ सृ०

(३)

अगर कर्म अनुसार दण्ड दे रचता जीव बीच ससार ।
पैदा करी दण्ड दे गणिका जो नित करै भोग व्यभिचार ॥
खूब दिया यह दण्ड ईश ने भ्रष्ट करे जगमे नर नार।
अगर कहो स्वाधीनपने से करती है गणिका यह कार ॥
है पूर्ण सर्वज्ञ ईश तो तीन काल की जाने बात ।
तब क्यों रखी देह गणिका की जब उसको था इतना ज्ञात ॥
हो करके स्वाधीन यह गणिका भ्रष्टाचार करे जगबीच।
तब तो दोष हुआ ईश्वर को किया जान यह कर्तव्य नीच ॥
ईश्वर के सर्वज्ञपने मे लगे दोष अब सुनो जिकर। सृ०

(४)

दुष्ट लोग जीवों को मार बेरहमी से हरते प्राण ।
किये ईश ने क्यों वह पैदा जब उसको था इतना ज्ञान ॥
अगर कहोगे घाती द्वारा दण्ड लहैं हैं जीव अजान।
आज्ञा से ईश्वर की अपने कर्तव्य का फल भोगें आन ॥
जब घातक ने ईश्वर की आज्ञा से कीना जीव संहार।

फिर क्यों उनको दोष लगावें पापी दुष्ट कहै संसार ॥
जैसे किसी धनी घर चोरी करी चोर धन लिया अपार।
धनी पुरुष के कर्म योग से करवाई चोरी कर्तार ॥
दंड मिला निर्दोष चोर को था ईश्वर का दोष मगर। सू०

(५)

अगर कहोगे घाती नरका है अपराध बात लो मान।
फिर क्यों पैदा किये ईश ने पापी जन चण्डाल महान् ॥
अगर जान कर इन्हें बनाये तब ईश्वर चण्डाल समान।
अगर किये बिन जाने पैदा तब तो है मूरख नादान ॥
हुआ नष्ट सर्वज्ञपना अब रक्षकपन पर करिये गौर।
जब करता है जग की रक्षा तब क्यों कीन्हे ठग अरु चोर ॥
अगर कहोगे खानपान का यही किया चोरों के तौर।
फिर क्यों पहरेदार बनाये फिरें जगाते कर कर शोर ॥
तब तो दगाबाज़ हैं ईश्वर जब करता यह कपट मकर। सू०

(६)

अरु यह भी कहते हो ईश्वर सबके घट में रहा है व्याप।
जब ईश्वर घटघट का वासी फिर तो आप करे पुण्यपाप ॥
आपहि ईश्वर पाप करे है जग जीवों को दे सन्ताप।
वह अन्याय है प्रगट नीति से इसको तो मानोगे आप ॥
और दूसरे जब घटघट में ईश्वर का प्रकाश निवास।
फिर स्वाधीन जीव है कैसे हरदम रहे ईश जब पास ॥

सच अरु झूठ कपट छल जग में पाप पुण्य जितने व्योहार।
सभी करता है परमेश्वर जीव करै होकर लाचार॥
करै ईश अरु भरै जीव दुःख यह ईश्वर में बड़ी कसर। सु०

(७)

घटघट व्यापी जब परमेश्वर तब मेरे घटवास जरूर।
मगर ईश के कर्तापन का मैं खण्डन करता भरपूर॥
तब तो अपना खुद वह खण्डन करै मेरा नहीं जरा कसूर।
अगर मेरा कसूर कहो तब रहै नहीं ईश्वर का नूर॥
फिर कहते हो निराकार वह जिसका नहीं कोई आकार।
मगर बिना आकार रचे क्या वस्तु दिल में करो विचार॥
अंगहीन नर क्या कर सकता हाथ पैर बिन अब लाचार।
है अचरज की बात बिना आकार रचै ईश्वर संसार॥
ऐसी झूठी बातों को माने नहीं कोई भी ज्ञानी नर। सु०

(८)

फिर कहते हो परमेश्वर का ज्योति स्वरूप सदा सुखकार॥
निराकार पन नष्ट होगया जब उसका है रूप आकार॥
सर्व शक्ति नहिं रही ईश में जब सब जीव हुये स्वाधीन।
सर्व ज्ञान नहीं रहा ईश मे नहीं दयालु करो यकीन॥
नहीं रहा घटघट का बासी समदृष्टि भी रहा न ईश।
रक्षक पन नहीं रहा ईश मे निर्विकार भी नही जगदीश॥
जो जो गुण तुम वर्णन करते कर्ता पन में रहै न एक।

नहीं जीव का कर्ता ईश्वर ज्ञानी लोगो करो विवेक ॥
ईश्वर होता है महादोषी उसको कर्ता कहो अगर । सृ०

(६)

एक बात का और गुणीजन जरा ध्यान से करिये ख्याल ।
ईश्वर ने रच करके सृष्टि क्यों सर अपने धरा वबाल ॥
अपने सुख आनन्द मे उसने व्यर्थ फिकर क्यों लीना डाल ।
हुआ फायदा क्या ईश्वर को फैलाया यह माया जाल ॥
अगर कहोगे ईश्वर ने रच जगको हुनर दिखाया है ।
मैं हूँ ऐसा वली गुणी जन मेरी यह सब माया है ॥
तव तो हुनर उन्हे दिखाया खुद ही जिन्हें बनाया है ।
बड़ा घमण्डी मानी है जो जगका जाल बिछाया है ॥
किस कारण से दुनियां को रच किया ईश ने प्रगट हुनर ॥ सृ०

(१०)

कर्तापन का कहा हाल अब हर्तापन का सुनो जिकर ।
अपने हाथ बनाकर वस्तु नहीं हरै कोई ज्ञानी नर ॥
अगर चतुर नर किसी वस्तु को बना बनादे खण्डित कर ।
उसे कहें सब मूरख दुनिया यह तो आती साफ़ नजर ॥
लिखकर साफ इबारत को जो मेटै अपने हाथ बशर ।
समझो उसको गलत इबारत या कुछ उसमे रही कसर ॥
कहो जीव रचने मे ईश ने की गलती या भूला डगर ।
या मूरखपन किया ईश ने हरै जीव पैदा कर कर ॥
नहीं ईश्वर हरै किसी को दोष लगाओ उसके सर ॥ सृ०

(११)

करो झूंठ और सच का निर्णय पक्षपात को तज गुणवान।
कर्तापन में परमेश्वर के होता है सब भ्रष्ट जहान॥
ईश्वर के सर दोष लगे अति पापी कपटी अरु नादान।
तुम ईश्वर को दोश लगाओ फिर बनते हो भक्त महान॥
अरे भाई जो कर्म करोगे उसका फल भोगोगे आप।
कहै शास्त्र सुत करै भरै सुत बाप करै सो भोगे बाप॥
भक्ती के कारण ईश्वर नहीं माफ करता है पाप।
दोष लगाओ मत ईश्वर को वरना भोगोगे संताप॥
पक्षपात को तज कर ज्ञानी यही बात लो हृदय धर॥ सृ०

(१२)

है नहीं ईश्वर कर्ता हर्ता जगत जीव का आदि न अन्त।
निज निज कर्म योग मे सुख दुख पावे जीव जगत भ्रमंत॥
नहीं ईश्वर कुछ दण्ड देत है नहीं ईश्वर कुछ करत हरंत।
रागद्वेष से रहित मोक्ष मे अजर अमर ईश्वर भगवंत॥
पाप करै सो लहै जीव दुख पुण्य करै सुख लहै अपार।
पाप पुण्य के नाश करे पर वीतरागपन है सुखकार॥
समझन कारण गुणी जनों के यह काफी हैं चन्द सतर।
सृष्टि को रच जीव बनाये इस में सन्देह पडे नजर॥

पिंजरे पड़कर, खूंटे बंधकर, बन्धन से दुख पावैं।
चाबुक पैनी दण्डा लाठी. मार सभी से खावैं ॥१०॥
पापी हिरदे धार दुष्टता, पंचेन्द्री पशू मारैं।
देवी पर बलिदान नाम से, असि के घाट उतारैं ॥११॥
है पशुगति अति कष्ट दायनी, पाय लहैं दुख प्रानी।
जो भोगै दुख, वह जिय जानै, या प्रभु केवल ज्ञानी ॥१२॥
कुछ शुभ भावन कर था जियने, सुरगति सुन्दर पाई।
पर मन इच्छित सुख नहिं पायो, दुख पायो अधिकाई ॥१३॥
रंक भयो, लख सम्पत पर की, झुर झुर वदन झिरायो।
देख २ सुख भोग पराये, कर चिन्ता दुख पायो ॥१४॥
बहु दुख माना चिन्ता कीनी, रुदन किया दुःखदाई।
जब मृत्यु से मास छः पहिले, गलमाला मुरझाई ॥१५॥
हा ! हा ! यह सुख भोग छुटेंगे, अब होगी तिथि पूरी।
इच्छा मन की पूरी नाहीं, रह गई हाय अधूरी ॥१६॥
कोई पुन्य उदय जब आयो, तब मानुष गति पाई।
कर्म उदय कर या गति माँही, कष्ट अनेक लहाई ॥१७॥
पुत्र बिना दुखिया नर कोई, चिन्तत मन में ऐसे।
मम धन सम्पति कौन भोगवै, नाम चलेगा कैसे ॥ १८॥
होय पुत्र मर जाय दुखी तब, यह कह रुदन मचावै।
जो ना होता तो अच्छा था, कष्ट सहा नहिं जावै ॥ १९॥
जीयो पुत्र भयो दुर्व्यसनी, धन सम्पति सब खोयो।
अब दुख मानत मात पिता सब, कुल का नाम डुबोयो ॥ २०॥

मित्र स्वारथी स्वारथ साधन, कर आँखें दिखलावै।
वैर घनकर धन यश प्राणन, का ग्राहक वन जावै ॥ २१॥
कुलटा नारी कलह कारिणी, कर्कश वचन उचारै।
दोऊ कुल की लाज गंवावै, पति को विष दे मारै ॥ २२॥
वेश्या गामी, परतिय लम्पट, ज्वारी माँसाहारी।
मद मतवाले पति से दुखिया, है पति-व्रता नारी ॥ २३॥
पुत्र पिता पर अरि सम टूटै, चाहे यह मर जावै।
पिता पुत्र पर रुष्ट होय कर, घर से दूर करावै ॥ २४॥
भाई भाई लडत स्वान सम, हैं प्राणन के लेवा।
वार कषाय उपाधि मचावैं, हैं दोऊ दुख देवा ॥ २५॥
विधवा नारी पति विन दुखिया, विन नारी पति कोई।
कोई बाला वृद्ध पती पा दुखित अती मन होई ॥ २६॥
इष्ट मित्र का होय विछोहा, शोक करत तन छीजे।
वाल अनाथ न कोउ सहाई, किसका आश्रय लीजे ॥ २७॥
कुल कुटुम्ब के लोग स्वार्थी, स्वारथ वश दुख देवैं।
दाव लगे पर धन सम्पति क्या, प्राणन तक हर लेवैं ॥ २८॥
नृप अन्यायी सव धन छीनै, अत्याचार करै है।
वन्दी गृह में डार मार कर, सम्पति सर्व हरै है ॥२९॥
धर्म नाम पर लडत अयाने, धन, लूटें अघतापी।
मार छेद कर प्राण लेत हर, रक्त बहावैं पापी ॥ ३०॥
न्यायासन पर वैठ करै अन्याय, घूस कोई लेवै।
दोषी को निर्दोष वनावे; दण्ड सुजन को देवैं ॥ ३१॥

मारैं लूटैं चोर लुटेरे, स्याल व्याल डरपावैं ॥
नीर डुबावे अगनि जलावै, सिंहादिक हन खावै ॥ ३२॥
मरी रोग दुर्भिक्ष सतावै, बिजुरी तन को जारै ।
काल भयानक नित डरपावत, आन अचानक मारै ॥ ३३॥
क्रोध मान माया अरु तृष्णा, या वश हो अघ कीनो ।
मार, किया अपमान, कपटकर, धन सम्पति सब छीनो ॥ ३४॥
परधन, घरनी तिय को हर कर, संकट आप उठायो ।
कारागृह में कष्ट उठाये, कुलको लाँछन लायो ॥३५॥
पायो निर्बल तन अति रोगी, या विटरूप भयाना ।
अंगहीन लंगड़ा या लूला, हुआ अन्ध या काना ॥३६॥
कानन-सुनत, न बोलत मुख से, देखत नाहीं आपा ।
कुष्ट रोग से, गलित भयो तन, तब दारुण दुख व्यापा ॥३७॥
वृद्धावस्था अर्ध मृतक सम, पाय महा दुख मानै ।
जाहि मृत्यु से जग भय खावै, ताहि निकट अब जानै ॥३८॥
कोई भिखारी दर दर याचत, दुर दुर वचन कहावै ।
रूखे सूखे झूंठे टुकड़े, पाकर भूख मिटावै ॥३९॥
बिन धन, निर्धन जन, निज मन मे कल्पै और दुख मानैं ।
देख धनी जन को दुखपावै, द्वेष ईर्षादिक ठानै ॥४०॥
धनी पुरुष मन, तोष नरचक, तृष्णा वश दुख पावै ।
लोभ पापका बाप, धरै मन, या से कष्ट उठावैं ॥४१॥
धन को लूटैं चोर लुटेरे, अगनि जलै नस जावैं ।
तब देखो धनवान पुरुष को, सोच सोच मर जावैं ॥ ४२॥

काहू के व्यवहार बणिज में, टोटा आय गयो है।
टोटा खोटा दुख का कारण, याते दुखित भयो है॥ ४३
तृष्णा के वश धनपति भूपति, नरपति हैं सब कोई।
संतोषामृत पान कियो नहिं, फिर कैसे सुख होई॥ ४४
इंद्रिय पांचौ करि विषयरत, बहु विधि नाच नचावै।
मनकी गति अति चचलपन को, लेय विषय में धावें॥ ४५
रूप रंग रस गध राग पर, जग जिय मन ललचावै।
हो आशक्त दुखित अति होवें, अपने प्राण गवावें॥ ४६
विषसम विषय विनासैं धनबल, यश, बुद्धि, शुचिताई।
प्राण जांय विषखाय विषय पर, भव भव मे दुखदाई॥ ४७॥
जो माने सुख या जग माही, विषयादिक विष खाके।
वह नर स्वान समान सुखी है, सूखा हाड़ चबा के॥ ४८॥
है असार संसार दुखों का, द्वार विपति का घर है।
क्षण २ दुख की हो बढ़वारी, आधि व्याधि का डर है॥ ४९॥
मोही मोह मे अध होय कर, जग वस्तु थिर मानै।
मेरा घर दर धन जन घरना, बन्धु मित्र निज जानै॥ ५०॥
हाड़ मॉस और रक्त राध की, देह अशुचि घिणकारी।
रूप रग पर थाके मोहित, होत मनुष अविचारी॥५१॥
जानत नाहीं रूप ढरै यह, ज्यों तरुवर की छाया।
बालू भींत समान नसै है, कञ्चन जैसी काया॥ ५२॥
स्वारथ के सब सगे सघाती, इष्ट मित्र जन प्यारे।
निज स्वारथ को साधन करके, पल मे होवें न्यारे॥ ५३॥

और किसीकी बात कहा यह, देह सग नहि जावै।
जाको पोखे नित संतोखैं, वहु विधि चैन करावै॥ ५४॥
या संसार महा बन भीतर, सार वस्तु नहिं कोई।
कौन पदारथ ऐसा कहिये, नास न जाको होई॥ ५५॥
जल बुद्‌बुद्वत जीवन जग मे, आस नहीं इक दिन की।
काल बली मुख खोलत जोहै, बाट एक पल छिन की॥ ५६॥
फिर जगमे किससे मोह कीजे, कौन वस्तु थिर कहिये।
ऐसे जग जंजाल जाल मे, फंसकर बहु दुख लहिये॥ ५७॥
कूए भॉग पडी को पी कर, सबने सुध बुध खोई।
उत्तम नर भव क्षेत्र पायकर, बेल न सुख की बोई॥ ५८॥
धर्मसाध परहित नहि कीना, योंही जन्म गंवाया।
मूढ पुरुष ने रत्न अमोलक, सागर बीच डुबाया॥ ५९॥
सुख चाहत भी सुख नहिं पावत, दुख पावैं ससारी।
याका कारण, मोह अज्ञता, अरु मिथ्यात दुखारी॥ ६०॥
जो चाहे सुख, जिय ससारी, आपा पर को जानै।
हित अनहित, अरु पाप पुन्य का, सभी भेद पहिचानै॥६१॥
विश्व प्रेम हिरदय विच धारै, पर उपकारी होवै।
पाप पक आतम पर लागो, संजम जल से धोवै॥ ६२॥
दर्शन, ज्ञान, सुचारित्र पाल, इच्छा भाव घटावै।
पंच महाव्रत धारण करके, जग से मोह हटावै॥ ६३॥
यह जग वस्तु समस्त विनासैं, इनसे ममता त्यागै।
आतम चिंतवन कर, निजमनमें, आतम हित में लागै॥६४॥

मैं आतम परमातम, चिद् आनन्द रूप सुख रूपी।
अजर अमर, गुण ज्ञान, शान्तिमय हूँ आनन्दस्वरूपी ॥६५॥
यह तन रूप स्वरूप, न मेरो, मैं चेतन अविनाशी।
ज्ञाता दृष्टा सुख अनन्त मय, हूं शिवपुर का वासी ॥६६॥
मेरी केवल ज्ञान ज्योति से, भरम तिमर नस जावे।
मैं ऐसा शुद्धात्म, चिदानन्द, जब यह जीव लखावे ॥६७॥
तब ही कर्म कलंक विनासैं, जीव अमर पद पावैं।
मिलै निराकुल सुख अविनाशी, परमातम कहलावैं ॥६८॥
आवे कबवह शुभ दिन जब मम, ज्ञान "ज्योति" जगजावैं।
सत्य अमर आतम को पाकर, मम जियरा सुख पावें ॥६९॥

दोहा।

मेरी है यह भावना, सुख पावे संसार।
मिले निराकुलता मुझे, हो आनन्द अपार ॥

५—समझ मन स्वारथ का संसार

हरे वृक्ष पर पक्षी बैठा, गावै राग मल्हार।
सूखा वृक्ष, गया उड पक्षी, तज कर दम मे प्यार ॥१॥
ताल पाल पै डेरा कीना, सारस नीर निहार।
सूखा नीर तालको तजगये, उड़ गए पंख पसार ॥२॥

बैल चहो मालिक घर यावत, तावत बांधों द्वार।
वृद्ध भयो तब नेह न कीनो, दीनों तुरत विसार ॥ ३ ॥
पुत्र कमाऊ सब घर चाहैं, पानी पीवैं वार।
भयो निखट्टू दुर दुर पर पर, होवत बारम्बार ॥ ४ ॥
जब तक स्वारथ सधै तभी तक, बने फिरें हैं यार।
स्वारथ साध बात नहिं पूछें, सब बिछुड़े संग छार ॥ ५ ॥
स्वारथ तज निज गह परमारथ, किया जगत उपकार।
"ज्योती" ऐसे गुरुदेव के, गुण चिन्तै हर वार ॥ ६ ॥

६—अब हम अमर भए न मरेंगे

अब हम अमर भये न मरेंगे हमने आतम राम पिछाना।
जल में गलत न जलत अग्नि मे असि से कटत न विष से हाना॥
चीरत फांस, न पीरत कोल्हू, लगत न अग्नि बाण निशाना॥ १ ॥
दामनि परत न हरत वज्रगिर विषधर डस न सके यह जाना।
सिंह व्याघ्र गज ग्राह आदि पशु मार सकें कोइ दैत्य न दाना॥२॥
आदि न अन्त अनादि निर्धन यह नही जन्मत नहिं मरत सयाना।
पाय पाय पर्याय कर्मवश जीवन मरण मान दुख ठाना ॥ ३ ॥
यह तन नसत और तन पावत और नसत पावत अरु नाना।
यों बहु रूप धरे बहु रूपियों स्वाग भरे मन माना ॥ ४ ॥
ज्यो तिल तेल दूध मे घी त्यों तन में आतम राम समाना।
देखत एक-एक ही समझत कहत एक ही मनुज अजाना ॥ ५ ॥

पर पुद्गल पर, पर यह आतम नहीं एक दो तत्व प्रधाना।
पुद्गल मरत जरत अरु विनसत आतम अजर अमर गुणवाना ॥६
अमर रूप लखि अमर भये हम समझ भेद जो बेद बखाना।
'ज्योति' जगी श्रुत की घट अन्दर ज्योति निरन्तर उर हर्षाना ॥७॥

——०॥०——

७—आत्मन उद्योग कर परमात्मन जो जाय बन।

आत्मन उद्योग कर परमात्मन जो जाय बन,
दूर हो बहिरात्मपन शुद्धात्मन् जो जाय बन।
छा रहे जो लोक मे नस जाँये वे मिथ्यात्व घन।
फैल जाये शुद्ध सम्यक ज्ञान सूरज की किरन ॥
भूल से अपनी तू आपा आप भूला जा रहा,
चक्र मे जन्मन मरण के फंस के जो दुख पा रहा।
है यदी इच्छा तेरी दर दर भटकना दूर हो।
कर्मरूपी बैरियों के दल का चकना चूर हो ॥
तबतो तू सत् शील संजम आदि निज गुण धार कर,
आप मे ले देख आपा झूठी मैं को मार कर।
मोह मद मिथ्यात्व ममता त्याग समता भावधर।
कर दमन इन्द्रीय पाँचों मनको अपने वशमे धर ॥
धार दर्शन ज्ञान चारित्र ब्रह्म में लौ लीन हो,
जीत राग अरु द्वेष रिपु को ताकि तू स्वाधीन हो।

फिर तू चिद् आनन्द है शुद्ध बुद्ध तेरा रूप है।
गुण ज्ञान का भण्डार है सुख रूप है चिद्रूप है॥

तू अजर है तू अमर है तू अमल है तू सबल,
ज्ञान दर्शन वीर्य सुख आनन्द तुझमें है अटल।

है अमर शुद्धात्म तू परमात्म तू शुभ रूप तू।
बुद्ध, ब्रह्मा, विश्नू, शंकर, वीर तू शिव रूप तू॥

ज्योति मय, गुणज्ञान मय, आनन्द मय सुखधाम है।
कैवल्य मय, सर्वज्ञ तुझको बार बार प्रणाम है॥

८—वीर महिमा

महावीर, अतिवीर, वीरवर, सन्मति, वर्द्धमान, गुनखान,
करुनाधारी, जग उपकारी, शिव अधिकारी, दया निधान।
मोह विनाशक, प्रेम प्रकाशक, शासक, शिव मारग दरशान,
जग उभारन, दुख निवारन, भव भय हारन, श्री भगवान ॥ १॥

करम काण्ड के कारण जग के थे सब जीव जन्तु भयवान,
फैल रही थी घर घर हिंसा मनुष्य मात्र बलिदान।
तब पशुओं का माँस यज्ञ मे हूमत थी भारत संतान,
वेद मन्त्र का आश्रय लेकर खून बहाते थे अनजान ॥ २

तब तुम दे उपदेश दयामय किया अहिंसा धर्म प्रचार,
फैली घृणा यज्ञ बलि से, तब दूर हुई हिंसा दुखकार।
ज्ञान भानु के उदय होत ही मिटा अंधेरा पाप विकार,
सत्य प्रकाश हुआ निज हित का तब सब करने लगे विचार ॥३॥

मनुष्य जाति का तो क्या कहना पशु आदि को दिया सुज्ञान,
ऊंच नीच का भेद मिटा कर सबको समझा एक समान।
दयावान भगवान मिटा अज्ञान, बताया वह गुण ज्ञान,
चौरासी की फाँसी कट कर हो शिव वासी अमर सुजान ॥ ४॥

अब यह कृपा करो श्री सन्मति शुभ मति पावें जगवासी,
वृद्धि होय गुण, ज्ञान, वीर्य, बल, दरस हरष सुख, शुभरासी।
मिटे भ्रमन जग, जाय करम भग, कट जाय यम की फाँसी,
पाय अमर पद सुखद निरापद ज्योति प्रकाशै अविनाशी ॥ ५॥

६—मुझे ऐसा सब्र-ओ-करार दे

मुझे सत्य धर्म से ऐ प्रभु सदा इस तरह का प्यार दे,
कि न मोड़ू मुंह कभी इससे मैं कोई चाहे सर भी उतार दे।
वह कलेजा ऋषियों को जो दिया, वह जिगर जोमुनियोंकोअता१ किया,
वह महात्माओं का दिल बस, घड़ी भर को मुझे भी उधार दे।
न हो दुश्मनों से मुझे गिला, करूँ मैं बुरे की जगह भला,
मेरे लब२ से निकले सदा दुआ३, कोई चाहे कष्ट हजार दे।
न मुझको ख्वाहिशइ मरतबा, न है माल-ओ-जर की हविस मुझे,
मेरी उम्र खिदमत-इ-खलक४ मे मेरे दीनबन्धु गुजार दे।
मुझे प्राणी मात्र के वास्ते करो सोज५-इ-दिल वह अता पिता,
जलूं उनके ग़म मे मैं इस तरह कि न खाक तक भी गुबार दे।
मेरी ऐसी जिन्दगी हो बसर कि हू सुरखरू दो जहान मे,
न मुझको मेरा यह आत्मा कभी शर्म लेल-ओ-निहार६ दे।
न किसी का मरतबा देखकर जले दिल मे आग हसद७ कभी,
जहाँ पर रहूँ, रहूँ मस्त मैं मुझे ऐसा सब्र - ओ - करार दे।
लगे जख्म दिल पै अगर किसी के, तो मेरे दिल मे तड़प उठे,
मुझे ऐसा दे दिल दर्द रस मुझे ऐसा सीना फिगार दे।
है प्रेम की यही भावना यही एक उसकी है आरजू८,
कि वह चन्द रोजा हयात९ को दया धर्म मे गुजार दे।

नोट—यह कविता मार्तण्ड, लाहौर, से कुछ तबदीली करके बनाई गई थी।

१दान, २ होंठ, ३ आशीर्वाद, ४ ससार, ५ जलन, ६ दिनरात, ७ ईर्ष्या, ८ इच्छा, ९ जीवन।

१०—मेरा तार प्रेम का तार हो।

मुझे प्राणीमात्र से ऐ प्रभु ! सदा इस तरह का प्यार हो,
मेरी जान सिद्क-इ-हज़ार हो, मेरा दिल भी लाख निसार१ हो।
लगे चोट गरचे ज़रा किसी के तो मेरा सीना फिगार२ हो।
लगे काँटा तन में जो गर किसी के तो मेरे दिल का वह ३खार हो।
लगे रोने कोई जो दर्द से बहे अश्क४ आंखों से तब मेरी,
ज़रा दुख किसी को जो हो ज़रा, तो न दिल को मेरे करार हो।
मेरी आंखों मे सभी घर करें मेरे दिल मे सबको जगह मिले,
मुझे सब का दिल से प्यार हो, मेरा सब को दिल से प्यार हो।
मैं तो प्राणी-मात्र के वास्ते तजूं स्वार्थ अपने को ए पिता !
मुझे हो लगन परमार्थ की, मेरा कार पर उपकार हो।
मुझे लाख गालियाँ कोई दे मुझे मार मारें हजार हो,
मेरे दिल मे फिर भी न द्वेष हो वले हो तो प्रेम अपार हो।
मेरा मन हो मन्दिर हो प्रेम का, मेरा दिल हो गैरों के लिये,
मेरा राग प्रेम का राग हो मेरा तार प्रेम का तार हो।
वहा फसद५ लैला के जो खुले बहे खून मजनूं की रग से यां,
वही हाल दिल का हो मेरे वही दिल में मेरे विचार हो।
मुझे सेवा धर्म का दो सबक मैं तो सबकी सेवा किया करूं,
मुझे सेवा धर्म से प्रेम हो, मुझे सेवा धर्म से प्यार हो।
मुझे है न दौलत की हविस६, मुझे चाह इज्जत भी नहीं,
मेरी भावना बस है यही मेरा आत्म खुद मुख्तार७ हो।

१ न्यौछावर, २ जखमी, ३ काटा, ४ आसू, ५ रग से खून, निकलना, ६ लालच, ७ स्वतन्त्र।

११—मेरी भावना

भावना दिन रात मेरी सब सुखी संसार हो,
सत्य संयम शील का व्यवहार घर घर बार हो।
धर्म का प्रचार हो और देश का उद्धार हो,
और यह उजड़ा हुआ भारत चमन गुलजार हो।
रोशनी से ज्ञान की ससार में प्रकाश हो,
धर्म की तलवार से हिंसा का सत्यानाश हो।
शांति औ आनन्द का हर एक घर मे वास हो,
वीर वानी पर सभी संसार का विश्वास हो।
रोग और भय शोक होवें दूर सब परमात्मा,
कर सकें कल्याण अपना सब जगत की आत्मा।

१२—प्रेम भरी भावना

सर्वज्ञ देव तुमसे मेरी यह इलतजा१ है,
संसार गहन वन में जो दुख भरा हुआ है।
उस दुख को मेटने की गुण ज्ञान जो दवा है,
वह हाथ मे हो मेरे यह मेरी भावना है।
मैं,उस दवा से मेटूं दुख जग के प्राणियों का,
और भ्रम सब मिटादूं दिल से अमानियों का ॥१॥
रह कर मैं ब्रह्मचारी विद्या करूं मैं हासिल,
आलिम२ बनूं मैं पूरा हर एक फन मे कामिल३।
होकर धर्म का माहिर४ हर एक अमल का आमिल५,

१ प्रार्थना, २ विद्वान, २ पारगामी, ४ आचार्य, ५ करने वाला,

चक्खूं चखाऊं सबको गुण ज्ञान के सरसफल ।
रक्षा करूं मैं अपने बल वीर्य की निभाकर,
सेवा करूं धर्म की जिस्मो जां गंवाकर ॥ २ ॥
अर्जुन सा बल हो मुझ में और भीम सी हो ताकत,
अकलंक सी हो हिम्मत निकलक सी शुजाअत ।
श्रीपाल जैसी थिरता और राम जैसी इज्जत,
विश्नु सा प्रेम मुझमे लक्ष्मण सी हो मुहब्बत,
श्रेयांस जैसी मुझ में हां दान वीरता हो,
सुखपाल जैसी मुझ में हां ध्यान धीरता हो ॥३॥
सादा गिजा हो मेरी, सादा चलन हो मेरा,
मैं हूँ वतन का प्यारा, प्यारा वतन हो मेरा,
सच्चा वचन हो मेरा, सच्चा प्रण हो मेरा,
आदर्श जिन्दगी हो उत्तम भजन हो मेरा ।
दुनिया के प्राणियों से ऐसा मेरा निवाह हो,
मुझको भी उनकी चाह हो उनको भी मेरी चाह हो॥४॥
दुनिया के बीच करदूं गुण ज्ञान का उजेरा,
और दूर सब भगा दूं अज्ञान का अन्धेरा,
हर एक का मैं करदूं आराम से बसेरा,
मेटूं दिलों से सबके यह लफ्ज तेरा मेरा,
मैं सबको एक करदूं आत्म का रस पिला कर,
वानी पवित्र सब को महावीर की सुना कर ॥५॥
भूलों को राह बता दूं हमराह खुद मैं जाकर,
गिरतों को मैं उठादू हाथों मे हाथ लाकर,

डूबे हुए बचादूं गोते मैं खुद लगा कर,
सोतों को मैं जगा दूं आवाज दे दिला कर,
विछड़ों को मैं मिला दूं हॉ प्रेम राग गाकर,
मुरदों को मैं जिला दूं रस प्रेम का पिलाकर ॥६॥
घर घर में जाके बाटूं मैं प्रेम की मिठाई,
विद्या की रोशनी से देने लगे दिखाई,
दिल में प्रेम सब के सब होवें वीर भाई,
होने लगे हर इक के दुख में हरइक सहाई,
'ज्योति' मैं यह करूंगा तन मन लगाके अपना,
सेवा करूगा सब की सब कुछ गवाँ कर अपना ॥७॥

१३—मेरी अभिलाषा

सन्त साधु बन के विचरूं वह घड़ी कब आयगी,
शान्ति दिल पर मेरे वैराग्य की छा जायगी ॥टेक॥
मोह ममता त्याग दूँ मैं सब कुटुम्ब परिवार से,
छोड़ दूँ झूठी लगन धन धाम और घर बार से,
नेह तज दूँ महल ओ मन्दिर और चमन गुलजार से,
बन मे जा डेरा करूँ मुँह मोड इस संसार मे ॥१॥ स०
इस जगत मे जो पदार्थ आ रहे मुझको नज़र,
थिर नहीं है इनमे कोई, है यह सब के सब अथिर,
जिन्दगी का क्या भरोसा यह रही दम २ गुजर,
दम में दम से दम में दम है दम मे दम से बे खबर ॥२॥स०
कौन सी वह चीज है जिस पर लगाऊँ दिल यहाँ,
आज जीवन बन रहा जो फिर वह जीवन कल कहां,

माल औ धन की सब हकीकत है जमाने पर अयाँ,
क्या भरोसा लक्ष्मी का अब यहाँ और कल वहाँ ॥३॥ स०
बाप माँ और बहन भाई बेटा बेटी नार क्या,
सब सगे अपने गरज के यार क्या परिवार क्या,
बात मतलब से करें सब जगत क्या ससार क्या,
बिन गरज पूछे न कोई बात क्या तकरार क्या ॥४॥ स०
था अकेला, हूं अकेला और अकेला ही रहूँ,
जो पडे दुख, मैं सहे और जो पड़े सो मैं सहूँ,
फिर भला किसको जगत मे अपना हमराही कहू,
कौन अपना है सहायक कौन का शरणा गहूं ॥५॥ स०
काल सर पर काल का खंजर लिए तय्यार है,
कौन बच सकता है इससे इसका गहरा वार है,
हाय जब हर हर कदम पर इस तरह से हार है,
फिर न क्यों वह राह पकडू सुख का जो भण्डार है ॥६॥ स०
ज्ञान रूपी जल से अग्नि क्रोध की शीतल करूं,
मान माया लोभ राग और द्वेष आदिक फिर हरूं,
बस में विषयों को करूं और सब कषायों को हरू
शुद्ध चित आनन्द से मैं ध्यान आत्म का धरू ॥७॥ स०
जग के सब जीवों से अपना प्रेम हो और प्यार हो,
और मेरी इस देह से ससार का उपकार हो,
ज्ञान का प्रचार हो और देश का उद्धार हो,
प्रेम और आनन्द का व्यवहार घर घर वार हो ॥८॥ स०
प्रेम का मन्दिर बनाकर ज्ञान देवी दू बिठा,

शान्ति आनन्द के घड़ियाल घण्टे दूं वजा,
और पुजारी बनके दूं मैं सबको आत्म रस चखा,
यह करूं उपदेश जग में, कर भला होगा भला ।।९।। स०
आए कब वह शुभ घडी जब बन विहारी बन रहूं,
शांति की शांत गंगा का मैं निर्मल जल पिऊं,
'ज्योति' से गुण ज्ञान की अज्ञान सब जग का दहूँ,
हो सभी जग का भला यह बात मैं हरदम चहूं ।।१०।।स०*

१४—हृदय के भाव

हृदय की पीर हरो भगवान। टेक।
भूला भटका दीन पथिक मैं फसा विपत में आन।
सीधा सुगम निकट निष्कन्टक निर्भय मारग छोर।
ऐसी विकट भयानक अटवी, फसा न पावे ओर ।।
फूल सुवास मधुर प्रिय पावन तन से मुख को फेर।
चला कटका कीर्ण झाड़ की ओर लिया तिन घेर ।।
निर्मल शीतल मधुर सलिल तज फंसा कीच में आन।
प्रेमामृत पी अमर भयो नहीं कियो मोह विष पान ।।
आत्म हितैषी सित मित भावी संत समागम त्याग।
छली कृतघ्नी आघी स्वार्थि जन से कीना राग ।।
सत पथ शांति सुधा कर शशि का तज कर दिव्य प्रकाश।
मिथ्यामत के घोर अन्ध मे भोग रहा हूँ त्रास ।।
ऐसे दुख सागर से तुम बिन कौन निकाले नाथ।
हरो ताप संताप हृदय का गहो "ज्योति" का हाथ ।।

---

* यह कविता पं० अर्जुनलाल जी सेठी की कविता के ढंग पर बनाई गई थी।

१५—अमोलक ऋषि

त्यागी, वैरागी, अनुरागी, दया धरमहु के,
ज्ञान गुण दाता सुख साता के दिवैय्या हैं।
करमन के शत्रु हैं, मित्र शील सजम के,
दुखी जग जीवन के हितकारी भैय्या हैं॥
भरो है अथाह दुख जल भव सागर में,
तामे पड़ी नैय्या ताहि नैय्या के खिवैय्या हैं।
जागतों को देत हैं "अमोल" सुख ऋषि राज,
सोते हुए लोगन को सोते से जगैया हैं॥

१६—हमारा गोपाल

हाय ! ऐ क़ौम तेरा आज सहारा टूटा,
छिप गया चाँद चमकता सा सितारा टूटा,
बह चली गम की नदी सब्र किनारा टूटा,
काम करने का जो था हाथ हमारा टूटा,
आज सरताज तिलक कौम का छूटा अफसोस,
मौत ज़ालिम ने हमें आन के लूटा अफ़सोस॥ १॥

आज वह सिंह कहाँ धाक मचाने वाला,
आज वह वीर कहाँ बल को दिखाने वाला,
आज वह सूर्य कहाँ तम को मिटाने वाला,
आज वह चन्द्र कहाँ शांति दिलाने वाला,
आज गंगा वह कहाँ प्यास बुझाई जिसने,
आज रहबर वह कहाँ राह दिखाई जिसने॥ २॥

बेग़र्ज बन के किया कौम पै साया जिसने,
अपने हाथों से धर्म-चक्र चलाया जिसने,
गिरती सतान को गिरने से बचाया जिसने,
गहरे मिथ्यात के गड्ढे से उठाया जिसने,

आज वह रूठ गया हमको मनाने वाला,
नाद जिन धर्म का भारत में बजाने वाला ॥३॥

बाग विद्या का लगा फूल खिलाए जिसने,
मीठे फल धर्म के हम सबको चखाए जिसने,
जो न देखे थे वही रंग दिखाए जिसने,
मसले जैन-धर्म के दुनियाँ को सुनाए जिसने,

आज गुरु देव गया छोड वह रोते हमको,
ख्वाब गफलत में बुरी तरह से सोते हमको ॥ ४ ॥

धूम जिन धर्म की दुनिया में मचाई जिसने,
खास और आम की शंकाएँ मिटाई जिसने,
नौजवानों के करी दिल की सफाई जिसने,
आके मैदान में दी ऐसी दुहाई जिसने,

भ्रम जिन धर्म मे हो जिसको मिटाए आकर,
ज्ञान देवी को यहाँ शीश झुकाए आकर ॥ ५ ॥

मान-अपमान का था ध्यान न जिसको बिल्कुल,
आन और बान का था ध्यान न जिसको बिल्कुल,
शान जीशान का था ध्यान न जिसको बिल्कुल,
लाभ और हानि का था ध्यान न जिसको बिल्कुल,

सत्य का पक्ष मगर लेता था बेडर होकर,
राह गुमराह को बतलाता था रहबर होकर ॥६॥

हाय अफ़सोस ! छुटा हमसे वह प्यारा गोपाल,
हाय अफसोस ! गया करके किनारा गोपाल,
हाय अफ़सोस ! सफर ऐसे सिधारा गोपाल,
लौट कर आएगा हरगिज न हमारा गोपाल,
यूं तो मरने को सभी जायेंगे मर दुनिया में,
नाम मर करके गया अपना अमर दुनिया में ॥ ७॥

हाय ! बे वक्त किया तू ने किनारा अफसोस !
हाय ! बे वक्त दिया तोड सहारा अफ़सोस !
है न सरदार जब कि हमारा कोई अफसोस !
कैसे यह "ज्योति" करे रंज गवारा अफ़सोस !
फिर भी कहते हैं कि तू भूल न जाना हमको,
इक दफा आन के सोते से जगाना हमको ॥ ८ ॥

१७—सेठ ज्वाला प्रसाद

सूत्रों के उद्धारक, प्रचारक जिन शासन के,
दान वीर धीर जिन धरम के धारी हैं।
राजा बहादुर सुखदेव जी के सुत नीके,
जैन कुल भूषण अरु पर उपकारी हैं॥
अग्रवाल वंश के सु-सुंदर शृङ्गार आप,
जाति के सुधारक भविष्य के विचारी हैं।
साधुन के भक्त गुणी जनन के प्रेमी आप,
"ज्वाला" जिन रत्नों के परखैय्या भारी हैं॥

१८—जातीय दशा और उसके सुधार के उपाय

ऐ क़ौम के प्यारो, ऐ कौम के दुलारो,
ऐ कौम के जवानो ऐ कौम के कुमारो;

गफलत की नींद छोड़ो सुस्ती को अब उतारो,
बैठो सभल के और कुछ कौमी दशा निहारो।
पहुँचे कहाँ पै इस दम इस बात को विचारो ॥१॥
पहिले हमारा मस्तक ऊँचा जहान मे था,
सारे जहाँ का नकशा अपने ही ज्ञान मे था,
दौलत का ढेर सचमुच कोनो मकान में था,
अमृत कहें हैं जिसको अपनी जवान में था।
वीरत्व का नमूना बांकी कमान मे था ॥ २ ॥
चर्चा धर्म का करना बस काम था तो यह था,
दुख को पराये हरना बस काम था तो यह था,
विपता में धीर धरना बस काम था तो यह था,
पूरा वचन को करना बस काम था तो यह था।
सच्चे धर्म पर मरना बस काम था तो यह था ॥ ३ ॥
श्रेयांश कैसे दानी थे वंश मे हमारे,
सुखपाल कैसे ध्यानी थे वंश मे हमारे,
अकलंक कैसे ज्ञानी थे वंश मे हमारे,
लाखों धरम के ज्ञानी थे वंश में हमारे।
धर्मज्ञ सारे प्राणी थे वंश मे हमारे ॥ ४ ॥
अब वंश की हुई है अपने खराब हालत,
घेरे हुए है इसको चारों तरफ से शामत,
घर घर में आ विराजी कम्बख्त यह जहालत,
जाती रही है उल्फत और मिट गई है दौलत।
अफसोस हो गई है रुखसत हमारी ताकत ॥ ५ ॥

वह बल कहाँ गया है बाँकी कमान वालो ?
वह गुण कहाँ गया है आगम के ज्ञान वालो ?
वह यश कहाँ गया है कीर्ति महान वालो ?
वह धन कहाँ गया है हीरों की खान वालो ?
अफ़सोस सब लुटाया ऊँची दुकान वालो ॥६॥

पैसा न एक पल्ले दौलत भला कहाँ फिर,
पूछे न बात कोई इज्जत भला कहां फिर,
लाठी को थाम चलना ताक़त भला कहां फिर,
आपस मे लड़के मरना उल्फ़त भला कहां फिर ।
माजूर खुद को रखना शोहरत भला कहां फिर ।७।

शादी मे जर गंवाना अब काम हो गया है,
रण्डियों को ला नचाना अब काम हो गया है,
फुलवारियां लुटाना अब काम हो गया है,
मुरदों का माल खाना अब काम हो गया है ।
गाली-गलोच गाना अब काम हो गया है ॥८॥

क़ौमी अनाथ बालक दर दर फिरें हैं मारे,
मरती हैं बिधवा बहिनें भूखी बिला सहारे,
कितने ही दीन भाई भूखे मरें विचारे,
माँगे हैं भीख घर घर कफनी गले मे डारे ।
अफ़सोस पर न रींगे जूं कान तक तुम्हारे ॥९॥

विद्या की कुछ न पूछो क्या चीज विद्या है,
डर इससे लग रहा है गोया यह कुछ बला है,

विद्या बिना न जाना हमने कि धर्म क्या है,
पूछे जो कोई हमसे जिन धर्म चीज़ क्या है।
देंगे जवाब है बस ग्रन्थों में जो लिखा है ॥१०॥

ग्रन्थों का ढंग सुनिये हमने जो करके छोड़ा,
अल्मारियों में उनको बस बन्द करके छोड़ा,
नहीं धूप तक दिखाई जिस दिन से धर के छोड़ा,
बे-ख़ौफ़ हो चूहों ने उनको कुतर के छोड़ा।
पर हमने दम विनय का दम दम में भरके छोड़ा ॥११॥

मेले लगा के हमने रौनक बढ़ा के छोड़ी,
घोड़े व हाथियों की लैनें लगा के छोड़ी,
क्या क्या सुनाऊ शोभा जो जो दिखा के छोड़ी,
सब नाम की गर्ज़ से दौलत लुटा के छोडी।
असली गर्ज़ को लेकिन जड़ से मिटा के छोड़ी ॥१२॥

हमने प्रभावना का सामान खोके छोड़ा,
जिन धर्म का दिलों से श्रद्धान खोके छोड़ा,
अपने बड़ों का आदर सम्मान खोके छोडा,
अपने बुरे भले का सब ज्ञान खोके छोड़ा।
ईमान की तो यह है ईमान खोके छोड़ा ॥१३॥

भैरों को हमने सच्चे दिल से मना के छोड़ा,
काली पर काले बकेरे का सर चढ़ाके छोड़ा।
मुर्गों को शीतला के ऊपर चढ़ा के छोड़ा,
कब्रों पर हमने पीरों की सिर निवा के छोड़ा।
शिव जी का लिंग अपने दिल में जमा के छोड़ा ॥१४॥

ऐ कौम के सपूतो ए आन बान वालो,
कुछ तो शर्म करो अब अर्जुन के बान वालो,
जो होगया सो बहतर पर आगे को सम्भालो,
कौमी बुराइयों को अब कौम से निकालो।
दो चार हाथ मारो पर कौम को बचा लो ॥१५॥

इस दम भला है मौका यह कौम को जितादो,
मौसिम बहार का है कुछ तुम भी गुल खिलादो,
उलटी को झट सुलट दो बिगड़ी को झट बनादो,
भेरी को जैन मत की चारों तरफ़ बजादो।
कुछ काम करके अपना बल गैर को दिखादो ॥१६॥

दस बीस ब्रह्मचर्य आश्रम बना के रहना,
दस बीस जैन कालिज कायम कराके रहना,
दस बीस अनाथालय फ़ौरन खुला के रहना,
दस बीस पुस्तकालय दिल से सजाके रखना।
दस बीस औषधालय प्राशुक खुला के रहना ॥१७॥

कौमी आदरों को सीने लगा के रहना,
कौमी बुराइयों को सचमुच भगा के रहना,
रंडी के नाच की जड़ जड से मिटा के रहना,
शादी गमी के खर्चों को तुम घटा के रहना।
है जैन क़ौम मुरदा इस को जिला के रहना ॥१८॥

दस धर्म का नकारा जग मे बजा के रहना,
गैरों को इस धर्म की अजमत दिखाके रहना,
हिंसा का नाम जग से बिल्कुल मिटा के रहना,
दुनिया मे जिन धर्म का सिक्का जमा के रहना।

यह धर्म है महा रथ इस को चला के रहना ॥१९॥
द्रव्यों की सत्य चर्चा सब को सिखा के रहना,
तत्वों का भेद असली सबको सुना के रहना,
ईश्वर का रूप सच्चा सबको दिखा के रहना,
सीधा जो मोक्ष मार्ग सबको बता के रहना।
मिथ्यात्व का अन्धेरा जग से मिटा के रहना ॥२०॥
जिन धर्म शास्त्रों का प्रचार करके रहना,
प्राचीन शास्त्रों का उद्धार करके रहना,
घर घर मे शास्त्रों का भण्डार करके रहना,
चारों वर्ण से हरदम तुम प्यार करके रहना
दुनियां में हर किसी का उपकार करके रहना ॥ २१ ॥
अब काम कीजियेगा दिल से विचार करके,
मैदा मे आइयेगा आलस उतार करके,
कुछ दान दीजियेगा अपनों का प्यार करके,
धन चीज क्या है देदो जां तक निसार करके।
मांगे है भीख 'ज्योति' पल्ला पसार करके। २२।

भजन नं० १६

प्रभुजी दीजो यह वरदान ॥ टेक ॥
हृदय शुद्ध हो, विमल बुद्ध हो, निर्मल होवे ज्ञान।
द्वेष क्लेश, अरु लोभ, छोभ, नस जाय कपट छल मान ॥
ऊंच, नीच, बलहीन, बली, धनहीन, धनी धनवान।
भेदभाव टुक रहे न समझे सबको एक समान ॥ प्रभुजी ॥
रोगी, शोगी, दुखित, भुखित को देख न उपजे ग्लान।

करें दूर दुख हम सब उनका हर्ष हृदय मे ठान ।।प्रभूजी० ।।
सेवा धर्म होय व्रत हमरा, दान प्रेम रस दान ।
करें विश्व भर की हम सेवा कर न्यौछावर प्रान ।।प्रभूजी०।।
राम, कृष्ण, बुध, वीर प्रभू का यह आदेश महान ।
करो सभी जीवों की सेवा, जो चाहो कल्यान ।।प्रभूजी०।।
सेवक बन सेवा व्रत धारे, करें प्रेम रस पान ।
टारें दुख भय शोक जगत का भारत की सन्तान ।।प्रभूजी०।।
दूर होय अज्ञान अंधेरा उदय ज्ञान का भान ।
'ज्योति प्रेम की घर २ फैले हो ऐसा भगवान ।। प्रभूजी०।।

२०—भजन

करो सब मिल जुल पर उपकार ।। टेक ।।
ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य, शूद्र सब हो जाओ तैयार ।
काम करो सब ऐक्य भाव से देश काल अनुसार ।। करो०
दूर करो अज्ञान अंधेरा कर विद्या प्रचार ।
डूबी जात प्यारी सन्तति उसे लगावो पार ।। करो०
गिरी आर्थिक दशा देश की निर्धन हुआ अपार ।
कर उद्योग कमाओ धन को भरें अतुल भण्डार ।। करो०
द्वेष ईर्ष्या वैर भाव मत भेद आदि तकरार ।
इनको त्याग प्रेम मग लाओ पहुंचो उन्नति द्वार ।। करो०
तन,मन,धन,जन,बल,गुण,विद्या,असि,मसि,कृषि,व्यापार ।
कर पुरुषारथ इन्हें बढ़ाओ है यह उच्च विचार ।। करो०
त्याग विदेशी, गहो स्वदेशी, हो भारत उद्धार ।
'अमर' नाम हो जाय आपका जग मे जीवन सार ।। करो०

२१—भजन

उठो अब करो देश उत्थान ॥ टेक ॥

फैली घर घर बीच अविद्या और छाया अज्ञान।
याही से भारत भयो गारत हुई देश की हान ॥ उठो०
जौन देश सब देशन सेती पाता था सन्मान।
आज वही धन, बल, गुण हीना दीख रहा भगवान ॥ उठो०
असि मसि कृषि अरु शिल्प चातुरी इनका छोड़ा ध्यान।
बणिज और व्यापार न करके माँगत भिक्षा दान ॥ उठो०
ब्राह्मण क्षत्री वैश्य मनुज सब छोड़ छोड़ निज आन।
दास वृत्ति कर करके धारण बन गए शूद्र समान ॥ उठो०
वीर धीर बुध राम कृष्ण जहँ उपजे वीर महान।
आज तहाँ बल हीन आलसी उपजत है सन्तान ॥ उठो०
उठो करो उद्योग बनाओ निज सन्तति विद्वान।
जाते होय धरम उजियारा घर घर फैले ज्ञान ॥ उठो०
समय नहीं फिर मिलि है ऐसा यह सोचो बुधवान।
ज्ञान भानु की 'ज्योति' जगाओ मिटे तिमिर अज्ञान ॥ उठो०

२२—भजन

हो हम मे बल ऐसा भगवान ॥ टेक ॥

बनें स्वयं ब्रह्मचारी भारी दादा भीष्म समान।
वीर बनें अर्जुन से बाँके लक्ष्मण से बलवान ॥ हो०
धीर वीर सुखमाल कुंवर सम जोधा ज्यो हनुमान।
कर्मवीर अकलंक सरीखे बन कर लें मैदान ॥ हो०
देश भक्ति से प्रेरित होकर करें देश उत्थान।

सेवा धर्म होय व्रत अपना, दान होय वलिदान ॥ हो०
कुमति कुरीति मिटायें जग से अरु फैलायें ज्ञान।
सुखी करें हम सब जीवों को दुख का मेट निशान ॥ हो०
डूबी जात दुख सागर मे भारत की सन्तान।
या की रक्षा करें हरें सब आधि व्याधि दुख खान ॥ हो०
गहें वीर मग, चलें सत्य पथ, करें शान्ति रस पान।
प्रेमवान छोडें नहिं "ज्योति" जाय भले ही प्रान ॥ हो०

२३—भजन

जग जीवन का मेला—रे मन! जग०

दूर दूर के जुड़े बटोही हुआ संग यह मेला।
दोय दिना का मेल-जोल सब फिर बिछुरन की वेला ॥रे मन०
कौन मात पितु वन्धु भाई कौन पुत्र अलबेला।
इष्ट मित्र पति देव नार क्या सब ही सगा सहेला ॥रे मन०
पल भर में हो जाँय जुदे सब कोई रहत नहिं मेला।
बहुते, गए जांय बहुतेरे, रह गए आप अकेला ॥रे मन०
विषय कषाय चोर धन छीनै न छोड़ें इक धेला।
"ज्योति" गुरु यों सीख देत हैं सावधान हो चेला ॥ रेमन०

२४— भजन

गावो सब स्वदेश गुणगान ॥ टेक ॥

जन्मभूमि की मूर्ति हिये धर, करिये निशदिन ध्यान,
सोचो युक्ति वही जिससे हो, जननी का उत्थान। गावो
मातृभूमि सेवा हित तज दो, ऊँच नीच अभिमान,
समझो सकल सुअन माता के, हैं जग एक समान। गावो०

मातृभाव की वेल बढ़ाओ, हो जासे कल्याण,
एक रंग रँगि मिलो प्रेम सों तजि ईर्षा मद मान। गावो०
तीस कोटि सुत होते जननी, पावें कष्ट महान,
भूल रहे कर्तव्य सभी हा, नहिं देते कुछ ध्यान। गावो०

२५—भजन

होय कब ऐसा दिन भगवान ॥ टेक ॥
भारत जागे, आलस त्यागे, तज निद्रा अज्ञान।
उद्यमवन्त होकर करिहैं निज पर का कल्याण ॥ होय०
असि मसि कृषि वाणिज्य चातुरी शिल्पकला गुणखान।
न्याय नीति से यह सब करके उपजावें धन धान ॥ होय०
ब्राह्मण विद्या पढ़ें पढ़ावें दें उपदेश महान।
क्षत्री करिहैं जग की रक्षा कोई न हो भयवान ॥ होय०
वैश्य करें वाणिज्य आदि शुभ कर्म धर्म को जान।
सेवा शूद्र करें तन मन से राख ध्यान अपमान ॥ होय०
चारों वर्ण कर्म निज पालें होकर उद्यम वान।
तब सब दुख मिट जांय सुखी हो भारत की सन्तान ॥ होय०
कुल क्रम से ही वर्ण न होवत वर्ण कर्म से जान।
याते कर्म करो नित ऐसे रहे आत्म अभिमान ॥ होय०
धर्मी शुभ कर्मी सब होवें पाकर आत्म ज्ञान।
'ज्योति' तब मिट जाय भ्रमण भव जिय पावें शिव थान ॥ होय०

२६—फूल

फूल तुम इतना क्यो इठलात ॥ टेक ॥
नन्ही कली खिली तुम फूले बने फूल की जात।
फूल फूल कर ऐसे फूले, फूले मन न समात ॥ १ ॥

भीनी पवन चलत ज्यो, त्यों तुम मन्द २ मुसकात ।
वेधत हृदय रसिक अलिगण के, बिन जाने यह बात ॥ २॥
झंझा वायु झकोरा लागत सब पखुरी झर जात ।
रूप रंग रस गंध जाय नसि मिले धूल में गात ॥ ३ ॥
चारि दिवस की "ज्योति" चादनी फेर अंधेरी रात ।
फूल न फूलो टुक जीवन पर पल छिन माँहि नसात ॥ ४ ॥

२७—भ्रमर

भ्रमर टुक मन मे करहु विचार ॥ टेक ॥
कोमल कमल प्रगट में दीखे, पर हिय वज्र कुठार ।
याही से पितु नीर न परसे, दूर रहे रवि यार ॥ १ ॥
ऐसे पापी हृदय कमल से, तुम करते हो प्यार ।
गध सुवास फास मे फस कर प्राण देत हो छार ॥ २॥
कमल मोह में विह्वल होय, तुम ऐसे बने गंवार ।
काठ छेदनी महा शक्ति को मन से दई विसार ॥ ३॥
जौन निठुर निर्दई न जानै प्रीति रीति को सार ।
वाके रूप रंग पर मोहे, बार बार धिक्कार ॥ ४॥
भ्रमर अमर यदि होना चाहो, लो निज 'ज्योति' संभार ।
खिलै मुदित मन, मिलै शाँति रस, बहै प्रेम की धार ॥ ५

२८—वसन्त

प्रिय आवो बसन्त मनावें ।
हिल मिल प्रीति सहित सब बैठे, दुइ के भाव नसावैं ।
प्रेम मधुर रस सरस सुधा रस पीवें और पिलावैं ॥ १॥

मन मन्दिर के सिंहासन पर ज्ञान विम्ब पधरावें।
श्रद्धा के फल फूलन आदि से पूजा कर गुण गावें ॥ २॥
जग जीवन का हित नित प्रति हो यही भावना भावें।
फैले घर घर बीच अहिंसा जीव सभी सुख पावें ॥ ३ ॥
देश प्रेम जातीय मित्रता धरम करम लौ लावें।
दर्शन ज्ञान चरित कर पालन आत्म शक्ति बढ़ावें ॥ ४ ॥
विषय कषाय मैल परिहर कर निर्मल आत्म बनावें।
भव २ भ्रमण महा दुख कारण कर बस अन्त दिखावें ॥ ५ ॥
राग द्वेष तम नष्ट करें सम भावन "ज्योति" जगावें।
पाय अमर पद सुखद निरापद परमातम कहलावें ॥ ६॥

२६—मायाचारी उपदेशक

सवैया

हाथन हिलाय, मटकाय नैन, देह को नचाय,
मुह बाय नाम सभा को रिझावे हैं।
इह लोक छोड, परलोक का कथन करे,
बड़ी बडी ऊंची ऊची बातें बतलावें हैं॥
बुरो है चुरुट पान, मदिरा न पीओ भैय्या,
पर आप सब कुछ लुके छिपे खावें हैं।
ऐसे उपदेश दाता फिरत समाज मांहि,
मायाचारी कर टुक मन न लजावे हैं॥

३०—सच्चे उपदेशक

जिस विधि मुख सों उचारैं बैन ताहि
विधि धरैं हिये तन से भी वाहि विधि करि हैं।

मन वच तन एक धरत विवेक मन,
कर पर उपकार हर्ष चित धरि हैं ॥
बोलत वचन मिष्ट विश्व के सुहित हेत,
प्रेम की मधुर तान मोह ताप हरि हैं।
ऐसे उपदेश दाता भ्राता जग जीवन के,
करत जो काज ताके तेहि काज सरि हैं ॥

३१—मैली चादर

उजली सी चादर पै मैल चढ़ौ मैलो भई,
मैली औ कुचैली चीज कौन मन भावे है।
अपने पराये सब घिन करें चादर सों,
आदर सों बुला पास कोई न बिठावे है ॥
हंसत चतुर नर देख मेरी चादर को,
अंगुली उठाय जग फबती सुनावे है।
कहां जाऊं, कहा करू, समझ न आवे एक,
देख देख चादर को जिय दुख पावे है ॥

३२—चादर शुद्धि

अपनी ही भूल से चढ़ाय धूल चादर पै,
भाई मेरे दुख माने हाथ कहा आवे है।
यह तो मैल ऐसौ नहीं छुटे न छुटाये जो,
करत उपाय मैल सभी छूट जावे है ॥
ज्ञान की सुगंग सेती भर के विवेक जल,
शुद्ध चित्त साबुन को काम मे जो लावे है।

उज्जल हो वाके चीर, कर तू भी यही वीर,
काहे को अधीर होत, मन को दुखावे है ॥

३३—वीर यश छायो है (समस्या)

जीवों को सताय कलपाय, कल पाये नहीं,
हिंसा में धरम नहीं, ऐसा वेद गायो है।
जीवन चहत सब मरण से भयभीत,
दुख की न चाह, सुख सभी मन भायो है ॥
या से सब जीवन को अपने समान जान,
हृदय धन सेती दया मेघ बरसायो है।
पायो सुख जीवन ने, भायो दया धर्म मन,
गायो वीर सुयश कि वीर यश छायो है ॥

३४—वीर यश छायो है

आज मिल बैठे सब पुण्यवान, पुण्यवन्त,
पुण्य के प्रताप सेती, पुण्य दिन आयो है।
पुण्य की ही चरचा है अरचा भी पुण्य ही की,
पुण्य का कथन, राग पुण्य ही का गायो है ॥
पुण्य के औतार वीर, धीर, महावीर, जिन,
पुण्य का प्रचार कर पुण्य प्रगटायो है।
उनका जनम दिन, छायो है हरष आज,
उन ही का घर घर 'ज्योति' यश छायो है ॥

३६—निराशा घन छायो है

मन भाये थियेटर सिनेमा के चित्रपट,
सोते सोते स्वप्न मे भी चित्रपट आयो है।

घर की रसोई शुद्ध रुचत न साहब को,
होटल का भोजन अभक्ष्य रुचि खायो है।
देश की न ओर ध्यान प्रेम नहीं जाती का,
धरम करम को ढकोसला बतायो है।
लख के सपूतन को इन करतूतन को,
भारत की आशा में 'निराशा घन छायो है'।

३६—आसरो तिहारो है

बीतो है अनादि काल भव में भ्रमण किये,
कभी सुर नर कभी पशु तन धारो है।
नरक में जाय कभी नरक के दुख सहे,
जनम मरण कर कर नित हारो है।
पाई है न चैन टुक हुआ हूँ बेचैन अति,
सुन नाम तेरो अब दुख सब टारो है।
आन के पुकारो नाथ हाथ गह उबारो नाथ,
सच तो है यह मुझे 'आसरो तिहारो है'।

३७—आसरो तिहारो है

काम ने सतायो, क्रोध मान ने दबायो आय,
लोभ ने लुभायो छल छल कर डारो है।
मोह ने भ्रमायो, द्वेष द्रोह ने गिरायो,
मन भायो दुराचार, जाने तुमसे बिसारो है।
तृष्णा ने वश कर जकड़ा है कस कर,
जग मे रुलायो और त्रास दे-दे मारो है।

कहाँ जाऊं कहा करूं सूझत न ओर छोर,
आयो तुम पास अब 'आसरो तिहारो है'।

३८—आसरो तिहारो है

रोवत किसान सर धुनत दूकानदार,
जमींदार साहूकार दुख लहो भारो है।
थके रोज़गार भये सभी बिना कार अब,
हुए हैं लाचार, नहीं सूझत किनारो है।
पेट को न रोटी, तन पर न लंगोटी तक,
भूखे नंगे दिन काट हाय हा पुकारो है।
सबको है सोच, लोच टेरत हैं रात दिन,
कीजिये उपाय नाथ! 'आसरो तिहारो है'।

३९—वीर भगवान हैं

जलों में जूं गंग जल, फलों मे जूं आम फल,
गिरों में कैलाश गिर देह मे जूं प्रान है।
ताल में कमल जिम, भाल पै तिलक सोहे,
गगन पर सोहें जिम शशि अरु भान है।
निधियों में समकित ऋधियों में प्रेम हित,
शील और संजम ज्यों रतनो की खान है।
'ज्योति' मे जू ज्ञान ज्योति करत प्रकाश जग,
वीरन में वीर त्योंही 'वीर भगवान हैं'।

४०—वीर भगवान हैं

दानियों में दानवीर महाराज श्रेयाँस,
ध्यानियों में धीर सुखमाल परधान हैं।

ज्ञानियों में ज्ञानवान गौतम से गणधर,
मुनियों मे नेम चन्द्र चन्द्र के समान हैं।
साधुओं में साधक हैं आत्मा के शुभ चन्द्र,
पर उपकारयों मे विश्नु महान हैं।
धरिन मे धीर वीर महावीर अति वीर,
वीरन में वीर त्यों ही 'वीर भगवान हैं'।

४१—दरश दिखायो है

त्याग जग राग, ले वैराग, पाग जिन रस,
आत्म मे लीन होय, आसन लगायो है।
देख वीतराग रूप शान्ति स्वरूप छवि,
ध्यान की अनूपता से मन हरषायो है।
आप के बताय हित मग पर पग रख,
जगत के जीवों ने लाभ अति पायो है।
धन धन वीर महावीर जिन राज आज,
मम अहोभाग्य तुम 'दरश दिखायो है'।

४२—दरश दिखायो है

दिया उपदेश दया धरम का हित कर,
हिंसा मे पाप महा पाप बतलायो है।
तज के कषाय अरु विषयों की वासना को,
आत्म कल्याण करो मग यह सुझायो है।
पर से ममत छोड निज से स्नेह जोड़,
आत्म में लीन निजाधीन पद पायो है।
धन धन ऐसे महावीर जिन राज आज,
मम अहोभाग्य तुम दरश दिखायो है।

४३—विहार की

नविया था साल माघ मास काला पखवाड़ा,
तिथि थी अमावस सो वो भी सोमवार की।
समय दोपहर का था, बजे होंगे सवा दो,
भूमि लगी डग-मग डोलने विहार की।
धड़ा धड, भड़ा भड़, गिरे महल मन्दिर, हा!
रही न निशानी शेष घर अरु द्वार की।
दब गये, मर गये, मनुष्य हज़ारों लाखों.
जनता ने भयभीत होय हा हा कार की

४४—विहार की।

धनवान धनहीन हुए एक क्षण मांहि,
आरथिक हानि हुई लाखन हज़ार की।
मरे हैं कुटुम्बी जन, रहे हैं अकेले एक,
रोय रहे कर कर याद परिवार की।
फला फूला देश सब हुआ बरबाद अब,
अहो भाई देखो दशा जगत असार की।
दम के दमामें सब दम मे ही बज उठे,
दम में पलट गई सूरत 'विहार की'।

४५—विहार की ।

मित्र से विश्वास घात, भाई से विरोध वैर,
करत अन्याय नित चाह तकरार की।
तज लोक लाज भय करत अकाज रहे,
काल की न सुध, सुध सम्पत अपार की।

तृष्णा के वशी भूत होय परपंच रचैं,
द्वेष की न थाह, राह चलें दुराचार की।
ऐसे भूमि-भार टुक चित में निहार देखें,
एक दम गई काया पलट 'विहार की'।

३६—विहार की।

क्रोध के औतार चढ़े मान के शिखर पर,
बढ़ बढ़ बातें नित करें अहकार की।
लोभ के हो वश नित करत कपट छल,
झूठ बोल जमा जोड़ें लाखन हज़ार की।
करत अनीति नित हरत-परायो धन,
पाप से न भय खांय, बने पूरे नारकी।
ऐसे दुराचारी नर, भली भाँति आंखें खोल,
सीखें कुछ सीख, दशा देख के 'विहार की'।

४७ अहिंसा व्रत धारी के

माल मतवाले कोई, शाल मतवाले कोई,
कोई मतवाले निज सुन्दर सी नारी के।
राज की है चाह, कोई चाहत अटूट धन,
कोई कोई इच्छुक हैं पद सरकारी के।
कोई नर चाहे मान, कोई राज पदवियें,
कोई जी हजूर बनें राज्य अधिकारी के।
हमे तो है चाह करें नित्य पूजा हृदय से,
हम तो पुजारी हैं, 'अहिंसा व्रत धारी के'।

४८--जीवन नैय्या

कौन के मात पिता सुत दारा,
कौन की भगिनी कौन के भैय्या।
कौन के मन्दिर महल अटारी,
कौन के सुन्दर बाग़ बगैय्या।
जग की वस्तु समस्त विनासत,
तन धन यौवन रूप रुपैय्या।
इनसे विमुख होय सुख उपजे,
पार लगे यह जीवन नैय्या।

४९---जीवन नैय्या

वीर प्रभू लई शरण तिहारी,
तुम भव सागर पार करैय्या।
भूले भटके हम दुखियन की,
पीर हरैय्या धीर धरैय्या।
भ्रम तम नाशक, सत्य प्रकाशक,
ज्ञान दीप की ज्योति जगैय्या।
जोड़ युगल कर विनवूं भगवन,
पार करो मम जीवन नैय्या।

५०---निराली है।

बाहर दिखात नेह मन माँहि द्वेष भरो,
उपर से धौली अरु भीतर से क़ाली है।
मन मे विकार, पर वचन में मीठापन,

कहैं कुछ, करें कुछ, नीति यह सम्भाली है।
मायाचारी कर, पर लोगन दिखायवे को,
तिलक लगाय माला हाथ मे उठाली है।
जगत को ठगत भये, वगुला भगत भये,
रच के प्रपंच चले चाल क्या 'निराली है'।

५१—निराली है।

तन मे लंगोटी नहीं, पेटहु को रोटी नहीं,
छपरे मे फूस नही, लोटा है न थाली है।
गांठ मैं छदाम नहीं, करवे को काम नही,
दिन रात सुवह शाम समय सव ख़ाली है।
ज्ञान नहीं, ध्यान नहीं, आदर सम्मान नहीं,
पीवन को चिन्ता रस, खावन को गाली है।
तापर भी वनें फिरं रावण के वड़े भैय्या,
देखो इन ऐंठे खा़ की शान क्या 'निराली है'।

५२—निराली है

वूढ़े वावा मौर वाँध, चले व्याह करन को,
आँखन मे स्याही लगा हाथन मे लाली है।
पोती के समान वधु आठ दस वरस की,
जानत न वात कछु ऐसी भोली भाली है।
जैसे वनराज आय मृगी को दवाय लेत,
तैसे वूढे वावा जी ने पोती को दवाली है।
कहाँ वर सत्तर को, आठ नौ की वधू कहाँ,
ऊंट के गले में ढाल वात क्या 'निराली है'।

५३--निराली है

अहो वीर महावीर जीवन है तेरो धन्य,

जगत के जीवन की विपदा जो टाली है।

काट कर पशु तब होमे जाते यज्ञहु में,

दया के प्रताप, जान उनकी बचा ली है।

ऊंच नीच भेद मिटा साम्य का प्रचार किये,

विश्व मे फैलाई 'ज्योति' सम्यक उजाली है।

फूंको सिंहनाद दया धरम का चहुं ओर,

. अहो कृपासिन्धु तेरी महिमा 'निराली है'।

५४---ऐसा आयगा

मित्र द्रोही होंगे मित्र करेंगे विश्वासघात,

भाइयों मे बैर भाव अति बढ़ जायगा।

बाप अरु बेटों मे रहेगी नित खटापटी,

स्वार्थ वश होके एक दूसरे को खायगा।

दग़ाबाज़ी मायाचारी झूठ छल छिद्र लोभ,

व्यभिचार दुराचार आदि पाप छायगा।

फैलेगा अंधेरा चहुं ओर घोर पापन का,

यह कौन जाने था कि समय 'ऐसा आयगा'।

५५—दिवाली है।

आज नवयुवकों ने फ़ैशन बनाया खूब,

बालों को सॅभाल मांग पट्टी हु निकाली है।

मूछों को मुड़ाय कर, जनखा बनाया भेष,

पान को चबाय मुख चुरुट दबाली है।

कालर गले में लटकाय सूट बूट हैट,
पहन पहन शकल अध-गोरों सी बनाली है।
देश के सपूत ऐसे जाने यह बात कैसे,
आज हमारे घर माँहि होली या 'दिवाली है'?।

५६—दिवाली है।

फाटके ने फाटक उघाड़े अलमारियों के,
भरी हुई थैलियों को कर दिया खाली है।
सैंकड़ों वरष के थे साहूकार लालामल,
बडन की आबरू मे इन खाक डाली है।
घर में न घर रहा, हाट में न हाट रही,
नार पै न रहो नथ विछुवैन वाली है।
फाटके से बन गये फाटे वेग लालामल,
देखो ये दिवालियों कीदुखिया 'दिवाली' है।

५७—दिवाली है

घर आई लक्ष्मी को फैंक निज हाथन से,
तज लोक लाज ला वेश्या नचाली है।
लुटवाई बाग़ बाड़ी फूंक दई आतिशवाज़ी,
बूर और वाडन में सम्पति लुटाली है।
जाति मे हो जाय नाम, देश में छा जाय यश,
घर की हवेली हाट सभी बेच डाली है।
आज मुहताज फिरें एक एक दमड़ी को,
ऐसे निरभागियों की कहो 'क्या दिवाली है।'

५८—दिवाली है

जाने आज खेल जुआ छक्का पंजा तीया दूआ,
सम्पत को हार, नार घर की हराली है।
बागहु बगीचे हार हार के हवेली हाट,
कोठी और बंगलों को कर दिया खाली है।
तन के वसन और भूषण भी हार दिये,
हार दिये भाँड़े सब लोटा और थाली है।
पाण्डवों के भैया बने, नल के सलतैया बने,
जुए के खिलैयन की वैरिन 'दिवाली है।'

५९—दिवाली

चेहरे पै पीलापन, तन में निबलपन,
गई नवयुवकों की शक्ति और लाली है।
घुटनों पै हाथ धर उठें और बैठे नित,
चाल डगमगाती सी चलें क्या निराली है।
जीवन की चाह छोड़, वीर्य जैसी सम्पत्ति को
श्वान हाड़वत निज हाथों लुटा डाली है।
जग में उजाला आज रोशनी दिवाली की है,
पर इन वीरन की चौपट 'दिवाली है।'

६०—राम रखवाली है

भादवे की धूप तेज सिंह का सूरज तपे,
जगल के मिरगों की खाल भई काली है।
हलवाह जोत के किसान ने बनायो खेत,
जासे तन बदन की चमड़ी सुखाली है।

बीज बोय, पानी सींच, करके नुलाई फिर,
काट मांह जिनस को तभी बेच डाली है।
सरकार साहूकार जमींदार और दार,
ऐंठ लिया सब याको 'राम रखवाली है।'

६१—पानी (हमारी पुकार)

हे घनश्याम गए कित वे दिन, तुम प्रताप हम मौज उड़ानी।
माखन मिश्री दूध दही घी, मेवा खात रहे मनमानी॥
पर अब मिलत न रूखी रोटी, कठिन लंगोटी तन पर पानी।
दुख से रोते हम दुखियन की, सूख गयौ अंखियन का 'पानी'॥

६२—पानी

निश दिन मेहनत करने-करते, वीत गई सगरी जिंदगानी।
पेट भराई मिली न रोटी, पाई न गांठ को कौड़ी कानी॥
दमडी की नहीं रोग में औषधि, दूध दही की कौन कहानी।
या दुख से रोते दुखियन की, बहत निरन्तर अंखियन 'पानी'॥

६३—पानी

विप्र सुदामा गए कृष्ण घर, यद्यपि मित्रता भई पुरानी।
पर सुन नाम सुदामा प्रभु ने, आय द्वार पर की अगवानी॥
हाथ पकड आसन बिठलायौ, पूछी कुशल बोल मृदुबानी।
षट रस व्यंजन द्रव्य परोसे, और पिलाया ठंडा 'पानी'॥

६४—पानी (कलिहारी स्त्री)

चारक पाहुने आये लला के, बोल उठी खिसयाय ललानी।
आग लगौ इत बसते घर को, करनी पड़ गई नित महमानी॥

टिक्कड़ पोले ज्वार मका के, खिच्चड़ रांध के घर मिश्रानी।
साग में घोल दे नून टका भर, दाल में डाल दे खारा 'पानी'॥

६५—पानी (आदर्श स्त्री)

आये घर महमान हमारे, धन धन भाग सफल ज़िंदगानी।
झाड़ बुहार सवार रसोई, भोजन की तैयारी करानी॥
दाल भात रोटी अरु हलुआ, पूरी खीर बना मिश्रानी।
प्रेम के साथ जिमा तू भोजन, मैं दूंगी भर ठंडा 'पानी'॥

६६—चाह

यश की न चाह षट रस की न चाह,
विषै भोग की न चाह, चाह नहीं लोक लाज की।
शाल धन्न माल की न चाह घोड़े हाथिन की,
घर हाट बाग की न चाह तख्तो ताज की।
पुत्र मित्र नार परिवार की न चाह टुक,
चाह नहीं भूषण वसन कुछ साज की।
सच तो ये बात चाह चित्त में है 'ज्योति' यह
वीतराग बन पायें मुक्ति जिन राज की।

६७—वीर ही कहायेंगे

तज के विदेशी चीज, लेवेंगे स्वदेशी शुद्ध,
प्रण ये हमारा इसे जीते जी निभायेंगे।
फ़ैशन के भूत को अछूत जान तज दियो,
सदाचार धार उच्च जीवन बनायेंगे।
स्वारथ को छार, धार सेवाव्रत मार मन,
कर्म वीर बन पीर देश को मिटायेंगे।

जग मे पताका फहरायेंगे अहिंसा की,
वीर के कहाय सुत वीर ही कहायेंगे।

६८—सब उड जांयगे।

भारत के लाल दोऊ, हिन्दु व मुसलमान,
टूटे दिल दौऊन के जब जुड जांयेंगे।
छूटेगी नमाज़ और वाजेकी ज़िद सब,
वैर और विरोध से ही मुख मुड जायेंगे।
दूध और शक्कर समान मिल होंगे एक,
तब दुख इनके स्वतः ही उड़ जायेंगे।
छाय रहे आज जो मुसीबत के बादल वे,
प्रेम के पवन सेती सब 'उड जायेंगे'।

६९—देश की भलाई में।

स्वारथ के मदमाते भूल परमारथ को,
अपनी भलाई चाहें देश की बुराई मे।
झूठ छल छिद्र मायाचारी से निकालें काम,
बनाय बात रहे दिन रात लगे पाप की कमाई में।
नाम बदनाम हुआ काम भी तमाम हुआ,
लोक लाज गई सब जगत हंसाई मे।
सच तो ये बात 'ज्योति' गाँठहु में बाँध लेहु,
आपनी भलाई भय्या 'देश की भलाई मे'।

७०—अछूत क्यों कहाते हैं ?

तन है अशुचि भरा मल-मूत्र गन्दगी से,
उच्च वर्ण वालों जैसा तन सब पाते हैं।

पानी में नहाके करें पूजन भजन जप,
अन्न, जल, दूध, फल भारत का खाते हैं।
माने देवी देवता को सर पै रखावें शिखा,
करें राम राम नित हरी गुण गाते हैं।
राम दास, हरी दास, नाम सब हिन्दु आने,
राम जाने फिर भी अछूत क्यों कहाते हैं?

७१—मोक्ष पद पाइये।

आत्मा के चार रिपु, क्रोध मान माया लोभ,
ध्यान की कमान तान मार के भगाइये।
राग, द्वेष, नाम के लुटेरे लूटें ज्ञान-निधि,
प्रेम की संभाल ढाल द्रव्य को बचाइये।
दयाधार, संजम संभार मार विषयों को,
तप की हुताशन में करम जराइये।
पर का ममत त्याग, पाग निज आतम में,
छूट बहिरातम से 'मोक्ष पद पाइये'।

७२—सबको

दूसरे की सुनें नाहिं अपनी ही कहें जांय,
सुने भी तो सुनैं बात निज मतलब की।
यदि कोई हठी होय चहत सुनावने को,
मन में कुपित होय, देत रहें भवकी।
राग से निभायो राग त्याग कर त्यागहु को,
स्वार्थ को सधायो बात कर अब तब की।

कोऊ कहै ऐसी दशा भई बहु लोगन की,
पर हम कहैं दशा ऐसी भई 'सबकी'।

७३—होली का राग।

हम किस विधि खेलें होली ?
जुदा जुदा कर दिये फूट ने, नहीं बनत है टोली,
पीले मुख पर रंग न सोहै, भूखे पेट ठठोली ॥ हम० ॥
गीत गान असलील भये सब, और विदेशी बोली,
स्वांग तमाशे के वश होकर भारत ने पत खोली। हम० ॥
रंग भंग सब किये जग ने, मिले वस्तु बहुमोली,
अन्न, वस्त्र घी तेल मिठाई, बढी सभी की बोली। हम०।
व्यर्थ व्यय और जाति रीति ने, बधी गाँठ को खोली,
सब धन जाता रहा गाँठ से पड़ गई गिरह पपोली।
यहाँ न अन्ना है तन नङ्गा वहाँ न घर में चोली,
यासे घर घर छाई उदासी, आई बैरन होली। हम०।
भूखे भक्ति न होय गोपाला, नगे होत न होली,
अब मन मार बैठ घर 'ज्योति' अपनी होली होली।

७४—बूढ़े का सहरा।

मेरा हरियाला बनरा, देखो री सब लाल। टेक।
सर बनरे के सहरा सोहे, धौले पड़ गये बाल,
आँख बने के स्याही सोहै पर गुच मुच है हाल ॥१॥ मेरा०
मुह मे पान बने के सोहे, जिससे टपके राल,
हाथ बने के मेंहदी सोहे किए खून मे लाल ॥२॥ मेरा०

गात बने के जामा सोहे लटक गई सब खाल,
पैर बने के जूता सोहे चले डिगमगी चाल ॥३॥ मेरा०
गले पड़ी जंजीरें सोहें जैसे पड़ा बवाल,
कंगना बीच कलाई सोहे देइ हथकड़ी डाल ॥४॥ मेरा०
दाँत नहीं बनरे के मुंह में पोले पड़ गए गाल,
खून नहीं बनरे के तन मे बिल्कुल हुआ निढाल ॥५॥ मेरा०
बाग पड़े बाराती सोहें ज्यूं कोढ़ी कंगाल,
पगड़ी बाँध चौधरी सोहें हों जैसे दल्लाल ॥६॥ मेरा०
लोग बने की खैर मनावें सिर पे ठाड़ा काल,
अरे देश के लोगो जागो कहे गलवू नक्काल ॥७॥ मेरा०

७५—क्योंकर हो भला ?

दिल दुखी उसका न क्योंकर हो भला
जो दुखाता और का दिल ही सदा ?
मित्र से छलछन्द जो छलिया करे
क्यों न आवे उस अधम पर आपदा ?

अनुक्रमणिका